Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-लोक

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अन्दर पढ़िए

पक्षियों में ध्वनि-संकेत ३
—नित्यानन्द पाठक

जीवन ७
—डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

नोबल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक १३
—ब्रह्मस्वरूप शर्मा

चन्द्रयान द्वारा यात्रा १९
—वाल्टर फ्रोहलिच

भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की नयी कृषि २३
—रतनकुमार टण्डन

बिच्छू २७
—सुरजीत

धान ३३
—नरेन्द्र छावड़ा

नेत्र की नियन्त्रण-विधि ३८
—मौजमसिंह राजपूत

एक महान सम्भावना की स्थापना ४३
—डाक्टर हर्ष प्रियदर्शी

प्राणों का मोह ४६
—रामनाथ थडानी

थोरियम चक्र ४९
—सन्तोषकुमार

स्थायी स्तम्भ

वैज्ञानिक उपलब्धियां १८

विज्ञान-क्लब ५३

इनाम लो ५५

तुम्हारी कलम से ५६

अपनी बात

यह मानना उचित नहीं है कि विज्ञान से परे कुछ नहीं है और सब कुछ विज्ञान तक ही सीमित है। वास्तव में एक यथार्थवादी दृष्टिकोण वह नहीं है जो सामान्यत: प्रत्यक्षीकरण तक सीमित होता है। यथार्थान्वेषी को सिद्धान्त रूप में विविध प्रयोगों को स्वीकृति देनी चाहिये, जिससे सीमा से परे का ज्ञान भी प्राप्त हो सके।

आज विज्ञान शब्द का प्रयोग वस्तुत: रूढ़िगत सन्दर्भ में होता है। जो कुछ अनुभूतिगत या आत्मानुभूतिगत है, वह विज्ञान के क्षेत्र में नहीं आता, किन्तु यह सत्य है कि विज्ञान का क्षेत्र निर्धारित अभी नहीं हो पाया है।

यह विवेक का युग है। विज्ञान निश्चय ही आज एक उपयुक्त परिभाषा की अपेक्षा करता है। मानव जाति को उस रास्ते पर बढ़ना है जिसका महत्व सार्वभौमिक है। विज्ञान की उपयोगिता सत्य के अन्वेषण से सम्बन्धित उसके प्रयत्नों में है। राष्ट्रपति डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् विश्वप्रसिद्ध दार्शनिक हैं और उन कतिपय लोगों में से हैं जिन्होंने विज्ञान का गहन अध्ययन किया है और इसे मानवता के लिए कल्याणकारी बनाने का प्रयत्न किया है। 'जीवन' में पाठक डाक्टर राधाकृष्णन् की विलक्षण शैली और व्याख्यात्मक दृष्टिकोण से परिचय तो प्राप्त करेंगे ही, एक विशेष निष्कर्ष से भी अवगत होंगे जो विज्ञान की उपयुक्त परिभाषा उपलब्ध करता है।

वर्ष ७ अंक १०

एक प्रति : ७५ पैसे

सम्पादक : शंकर मेहरा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्षियों में ध्वनि-संकेत

नित्यानन्द पाठक

पक्षी एक-दूसरे के संसर्ग में रहते हैं, हालांकि अपवादस्वरूप कुछ पक्षी ऐसे भी हैं जो एकान्त जीवन जीते हैं। ऐसे पक्षियों में किंग फिशर, कक्कू उल्लेखनीय हैं। किन्तु अधिकांश जातियां सामाजिक होती हैं। सामाजिकता का मुख्य आधार है भाषा और अभिव्यक्ति। तो पक्षी साथ-साथ तभी काम कर सकते हैं जब वे अपने भाव एक-दूसरे को समझा पाने में समर्थ हों।

पक्षी एक-दूसरे को अपने भावों से कई विधियों से अवगत कराते हैं—बोलकर, चहककर और अपने पंखों को फड़फड़ाकर। ये ऐसी विधियां हैं जिनकी सहायता से पक्षी एक-दूसरे से बातें करते हैं।

शताब्दियों से वैज्ञानिक तथा सामान्यजन पक्षियों की भाषा समझने का यत्न करते रहे हैं। आज इंग्लैंड, अमरीका तथा जरमनी में कुछ संस्थान पक्षियों की भाषा के अध्ययन में लगे हुए हैं। किन्तु यह एक तथ्य है कि कोई भी पक्षी-विशेषज्ञ पक्षियों की भाषा को पूरी तरह समझने का दावा नहीं कर सकता। वास्तव में पक्षियों की भाषा अनोखी होती है। मनुष्य की भाषा और पक्षियों की भाषा में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अन्तर यह होता है कि मनुष्य की भाषा वैज्ञानिक आधार लिये हुए होती है, और उसे सीखा जा सकता है; जबकि पक्षियों की भाषा का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं होता, और उसे सीखा नहीं जा सकता। पक्षी जो कुछ बोलते हैं वे शब्द नहीं होते, उन्हें हम एक प्रकार से आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति कह सकते हैं।

पक्षी गीत क्यों गाते हैं ?

पहले तो हमें यह जानना है कि पक्षी गीत क्यों गाते हैं और उनके जीवन में इसका क्या महत्त्व है ? वास्तव में पक्षियों के गीत में तथा दूसरे को पुकारने की ध्वनि में अन्तर होता है। प्रजनन-काल में केवल नर ही गाता है। वह प्राय: एक ही ध्वनि विशेष अन्तर पर करता है जो गीत की तरह लगती है। कुछ पक्षी ध्वनि अपने पंखों तथा चोंच को रगड़कर करते हैं, और कुछ पक्षी कंठ से।

कुछ पक्षी बहुत मधुर गीत गाते हैं। उनका स्वर इतना मधुर होता है कि लगता है, हम नैसर्गिक संगीत सुन रहे हैं। थ्रश परिवार के पक्षी गाने वाले पक्षियों में विशेष उल्लेखनीय हैं। पक्षियों में यह भी पाया गया है कि वे गाते समय खेलते हैं, या अपना घोंसला बनाते हैं। प्रजनन-काल में जब दूसरा नर पास ही कहीं होता है, तो जो नर गाता है, वह अपना गीत और प्रभावशाली कर देता है।

अक्सर हम पाते हैं कि अनेक पक्षी जो देखने में एक-दूसरे से भिन्न लगते हैं, प्राय: एक ही तरह के गीत गाते हैं। और यह भी तथ्य है कि पक्षी जो देखने में प्राय: एक जैसे होते हैं,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्षी क्यों गाते हैं ? क्या हम उनकी भाषा समझ सकते हैं ?

अलग-अलग प्रकार के गीत गाते हैं।

पक्षी-विशेषज्ञों का मत है कि हलके रंग के पक्षी अच्छे गीत गाने वाले होते हैं। यह अनुमान है कि जो पक्षी चमकीले रंगों के होते हैं, उन्हें अपनी अभिव्यक्ति में विशेष कठिनाई नहीं होती और वे इसके लिए माध्यम के रूप में अपने रंगों का प्रयोग करते हैं; पर जो पक्षी फीके रंगों के होते हैं उन्हें अपनी अभिव्यक्ति के लिए कंठ का सहारा लेना पड़ता है। यह एक सामान्य धारणा है, और इसे कोई ठोस सिद्धान्त नहीं कहा जा सकता। पक्षी-विशेषज्ञों ने अपने निरीक्षणों में इसे परिलक्षित किया है।

हलके, फीके रंगों वाले पक्षी आसमान में काफी ऊंचाई तक उड़ जाते हैं और फिर गाने लगते हैं।

एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न

क्या पक्षी आनुवंशिक रूप से गायक होते हैं, या वे जन्म लेने के बाद गाना सीखते हैं ? यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। कुछ प्रयोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस सम्बन्ध में किये गये हैं। एक बार एक पक्षी को जैसे ही वह अंडे में से निकला, दूसरे परिवेश में रख दिया गया। उसे अपनी जाति के पक्षियों का स्वर सुनने का अवसर नहीं मिला। लेकिन बाद में, जब वह बड़ा हुआ तो पाया गया कि वह भी उसी तरह गा सकता है जिस तरह उसकी जाति के और पक्षी गाते हैं। निस्सन्देह यह आश्चर्यपूर्ण है कि पक्षी वंशगत प्रभावों के कारण अपना स्वर ग्रहण कर लेते हैं। लेकिन कुछ ऐसे पक्षी भी हैं जो यदि ध्वनि-रहित परिवेश में प्रारम्भ से ही पाले जाते हैं, तो ऐसी स्थिति में वे गाना नहीं गा सकते। इस तरह के पक्षियों में फ्लाई-कैचर विशेष रूप से उल्लेख्य है।

नाइटेंगल के बच्चे यद्यपि शुरू से ही गाने वाले होते हैं, पर वे व्यवस्थित रूप से गाना अपने मां-बाप से सीखते हैं। शिशुओं के गीत में मिठास नहीं होती।

कुछ पक्षियों का स्वर इतना मधुर होता है कि लगता है, हम नैसर्गिक संगीत सुन रहे हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पक्षी विशेषज्ञ टेप-रिकार्डर की सहायता से पक्षियों के गीत का अध्ययन करते हैं। टेप पर अंकित ध्वनियों से विभिन्न पक्षियों की बोली समझने तथा उनकी भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करने में सहायता मिलती है। पिछले दस-पन्द्रह वर्षों में इस दिशा में अनेक अनुसन्धान हुए हैं और पक्षियों की भाषा तथा उनकी अभिव्यक्ति के साधनों के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों को विस्तृत जानकारी प्राप्त हुई है।

घुम्मकड़ प्रकृति के पक्षी आपस में सम्पर्क स्थापित करने के लिए एक-दूसरे ही प्रकार की ध्वनि करते हैं। रात में जो इनकी ध्वनियां सुनी जाती हैं, और विशेष रूप से कम आवृत्ति की, वे पक्षी-विशेषज्ञों के लिए एक पहेली हैं। रात में ये पक्षी ध्वनि द्वारा अपनी जाति के अन्य पक्षियों को अपनी स्थिति का संकेत देते हैं।

भोजन के सम्बन्ध में निश्चित संकेत

भोजन के सम्बन्ध में प्रायः सभी पक्षियों के निश्चित संकेत होते हैं। शिशु पक्षी जब भूखे होते हैं, तो वे ध्वनि द्वारा संकेत करके भोजन मांगते हैं। हेरिंग गल्ल नामक पक्षी यदि थोड़ा-सा भोजन पाता है, तो चुपके से हजम कर जाता है, पर यदि उसे अकस्मात काफी भोजन मिल जाता है, तो वह और पक्षियों को भी आवाज देता है। फल खाने वाले अधिकांश पक्षी जब वृक्ष पर फल देखते हैं, तो आवाज देकर अपनी जाति के अन्य पक्षियों को भी बुला लेते हैं। भोजन के मामले में प्रायः पक्षियों में सहयोग की भावना का आभास मिलता है। लेकिन जहां भोजन की थोड़ी मात्रा होती है और पक्षियों की संख्या अधिक होती है, वहां पक्षी आपसी सहयोग की बात भुला देते हैं, और जल्दी-जल्दी जो मिलता है हजम करते जाते हैं; कभी-कभी ये दूसरे पक्षियों से उलझ भी जाते हैं।

पक्षी खतरे में पड़ जाने पर भी ध्वनि करते हैं। प्रायः यह देखा गया है कि बाज-जैसे अन्य शिकारी पक्षियों को देखकर कुछ पक्षी भयानक ध्वनि करते हैं। इनकी ध्वनि भिन्न-भिन्न शिकारियों के लिए भिन्न-भिन्न होती है।

कुछ पक्षी के नर-मादा देखने में एक तरह के होते हैं। आपसी पहचान के लिए ये विशेष प्रकार की ध्वनि करते हैं। कुछ पक्षी जब आपस में मिलते हैं, तो भी ध्वनि करते हैं।

पक्षियों में सीखने की प्रवृत्ति नहीं के बराबर होती है। तोता अपवाद है।

गायिका कोयल

कोयल वह भारतीय पक्षी है जिसे गाने का बहुत शौक है। वह बड़ी उन्मुक्तता से गाती है। फारस की बुलबुल की तरह वह दिन-रात गाती है। वसन्त के आरम्भ में जब आम के वृक्ष बौरों से लद जाते हैं तो मंजरी, कोंपलें और फल का स्वाद लेती हुई ऐसी तान छेड़ती है कि श्रोता मन्त्रमुग्ध हो जाता है। यह डाल-डाल पर नाचती है और फिर गाने में तल्लीन हो जाती है।

वसन्त के बाद गरमियों में भी वह गाती रहती है। प्रायः साल में चार महीने से अधिक वह चुप नहीं रहती। यह जाड़ों में दक्षिण की ओर चली जाती है, पर कुछ कोयलें जाड़े में भी ठंडे क्षेत्रों में बनी रहती हैं। यह अवश्य है कि कोयल अधिक ठंडे क्षेत्रों में रहना पसन्द नहीं करती। यही कारण है कि यह पहाड़ों की ओर नहीं जाती है।

केवल उत्तर-पश्चिमी सीमान्त को छोड़कर यह भारत के सभी राज्यों में पायी जाती है। चीन में भी कोयल मिलती है। यह प्रायः छोटे-छोटे फलों को भोजन के रूप में ग्रहण करती है। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि यह पूरी तरह शाकाहारी है।

कोयल के नर और मादा के रूप में काफी अन्तर होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन सम्भावित व्याख्या: एक दृष्टिकोण

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन्

वैज्ञानिक अनुसन्धान के विषय में सर्वसाधारण जो सोचते हैं, उससे अधिक वह आत्मानुभूतिगत है। हेनरी पायनकेयर की गणित-सम्बन्धी कल्पना अवश्य एक सन्दर्भित समस्या है। यह अवश्य रचनात्मक है। हम तर्कों के आधार पर प्रमाण देते हैं, किन्तु अनुसन्धान आत्मानुभूति द्वारा करते हैं। इस प्रसंग में हम एक एकात्म क्रिया-हीनता पाते हैं। माइकल फैराडे असम्भावित अनुसन्धान के एक और उदाहरण हैं। सम्पूर्ण व्यक्तित्व इसमें संलग्न है। जब दार्शनिक अज्ञेय विश्लेषण में लग जाते हैं, तो उनका रचनात्मक गुण उनसे पृथक् रह जाता है।

राधाकृष्णन् का विश्वास है कि आधुनिक विज्ञान अमूर्त विचारों तथा आंकड़ों पर बल देता है। एडिंगटन और जीन्स की धारणा के अनुसार पदार्थ एक प्रत्यय में परिवर्तित हो सकता है। सापेक्षता तथा क्वांटम यान्त्रिकी के सन्दर्भ में यह (पदार्थ) घटनाओं (क्रियाओं) का समूह है जिनका स्वभाव और अन्तः शक्ति होती है। पदार्थ की परम्परागत व्याख्या अब व्यावहारिक नहीं है। इसमें (नवीन व्याख्या में) संसार की वैदिक धर्म की व्याख्या का आभास है। सभी अस्तित्वमय हैं। एक अन्य रूप में राधाकृष्णन् तथ्यस्वरूप मानते हैं कि विज्ञान आदर्शवाद का समर्थन करता है। जो कुछ हम जानते हैं, वह वस्तुओं का हमारे भीतर पड़ने वाला प्रभाव होता है; सब कुछ अनुभव है और असम्भावित अनुभव। यह एक आदर्शवादी टिप्पणी है, और एक सर्वथा नवीन वैज्ञानिक आदर्शवाद की भूमिका है।

राधाकृष्णन् की यह प्रबल धारणा है कि विज्ञान का विकास बौद्धिक स्वतन्त्रता ही की स्थितियों में हो सकता है। किसी सभ्यता के अन्तर्गत मानव की भलाई के अर्थ में प्रयोजित वैज्ञानिक उपलब्धियां निर्बाध अन्वेषण के लिए सैद्धान्तिक अनुमति पर निर्भर करती हैं। ऐसी स्वतन्त्रता समाज के आर्थिक और राजनीतिक स्वरूप ही से प्राप्त नहीं होती। यह मानव के अस्तित्व के अन्तरतम तथा उसकी धार्मिक मान्यता से प्राप्त होती है। बौद्धिक स्वतन्त्रता विज्ञान के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसका उद्भव मनुष्य के अस्तित्व के अर्थ तथा प्रयोजन से होता है। मनुष्य के भाग्य के सम्बन्ध में जो विचार निर्धारित किये जाते हैं उनके आधार पर एक सार्वभौम परियोजना में उसकी स्थिति ज्ञात होती है।

प्राचीन काल में वैज्ञानिकों को वस्तुपरक चिन्तन तथा नियन्त्रित प्रयोगों के विषय में बहुत कुछ सीखना पड़ता था, क्योंकि विज्ञान की विधियां धीरे-धीरे स्पष्ट रूप में परिभाषित होती थीं। लेकिन उन्होंने इस विश्वास के साथ कदम बढ़ाये कि प्रकृति में उनकी जिज्ञासा ऐसे ज्ञान को प्रत्यक्ष नहीं करेगी जो उनके द्वारा दृढ़ता से मान्य धार्मिक विश्वासों के विपरीत होगा। यह विश्वास कि प्रकृति एकात्म है, कि ब्रह्माण्ड एक नियम के अन्तर्गत क्रियारत है—इस धार्मिक ज्ञान के अन्तर्गत एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तार्किक सम्भावना है कि सार्वत्रिक सत्ता वाला ईश्वर अस्तित्वगत है। राधाकृष्णन् इस वैज्ञानिक सम्भावना का समर्थन करते हैं कि बिना कारण के कार्य नहीं होते, और इस पर बल देते हैं कि यह धार्मिक विश्वास—विश्व उद्देश्यपूर्ण तथा नियोजित है—स्वाभाविक है। यह धारणा, ब्रह्माण्ड इतना रहस्यपूर्ण नहीं है कि वह बिना कष्टसाध्य अध्ययन के समझा न जा सके, इस विश्वास का परिणाम है कि मनुष्य की रचना एक सार्वभौमिक परियोजना में भूमिका निभाने के लिए हुई थी।

पिछले पैंतीस वर्षों से भारतरत्न डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् का प्रभाव निरन्तर बढ़ रहा है। आज दर्शन, धर्म तथा विज्ञान पर उनकी रचनाएं विश्व के कोने-कोने में पढ़ी जाती हैं।

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् (मई १३, १९६२ से भारत के राष्ट्रपति) का जन्म ५ सितम्बर १८८८ को तिरुत्तनी में हुआ था। मद्रास क्रिश्चियन कालेज में शिक्षा हुई; प्रायः बीस वर्षों तक भारत तथा इंग्लैण्ड के विभिन्न विश्वविद्यालयों में दर्शन के व्याख्याता रहे। १९४६ में इन्होंने यूनेस्को में भारत का प्रतिनिधित्व किया, १९४९ में इस संस्था के चैयरमैन बने। उसी वर्ष रूस में स्वाधीन भारत के प्रथम राजदूत के पद पर इनका चुनाव हुआ।

१९५२ में ये भारत के उपराष्ट्रपति बने। राष्ट्रपति का पद ग्रहण करने तक ये उपराष्ट्रपति रहे।

दार्शनिक तथा राजमर्मज्ञ डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् दर्शन पर अनेक उच्चकोटि के ग्रन्थों के रचयिता हैं जिनमें 'ऐन आइडियलिस्ट वियू आव लाइफ', 'इस्टर्न रेलिजन्स एण्ड वेस्टर्न थाट', 'इंडियन फिलासफी' और 'द हिन्दू वियू आव लाइफ' प्रमुख हैं।

हाब्स और लाइबनिट्ज एक सीमित रूप में प्रशासनिक क्रिया-कलापों से सम्बद्ध रहे हैं। डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् एक प्रशासन के प्रमुख के रूप में प्रथम दार्शनिक हैं। इनका मत है कि पूर्णता की ओर जाने वाला मार्ग एक ढलान की तरह है, न कि सीढ़ियों की भांति। इन्होंने देश के लिए इस मार्ग का समर्थन किया है। इस समय ये शिखर पर हैं। इनके मतानुसार दर्शन सैद्धान्तिक संरचना से कहीं अधिक अन्तर्दृष्टियों का प्रदर्शन है। राष्ट्रपति के रूप में डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् की अन्तर्दृष्टि एक दार्शनिक तथा राजमर्मज्ञ की है।

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् की दर्शन-सम्बन्धी व्याख्याएं एक विशेष परम्परा को सम्मुख करती हैं जिसे हम, नयी पीढ़ी के लोग, वैज्ञानिक आदर्शवाद तथा एक विशिष्ट जीवन-धारा पर टिप्पणी कहते हैं। इस जीवन-धारा में ये बहुत कुछ शोषित कर चुके हैं, और यहां विज्ञान को स्थान प्राप्त है। मेरे-जैसे और लोग जो इनके निकट सम्पर्क में हैं, अच्छी तरह जानते हैं कि एक पूर्ण व्यक्तित्व सद् की ओर उन्मुख है, और वह मानव जाति के मूल्यांकन के लिए सतत संलग्न है।

प्रस्तुत लेख में पाठक पायेंगे कि डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् जीवन के सार्वत्रिक और उपयुक्त मूल्यांकन के लिए प्रभावशाली रूप में प्रयत्नशील हैं।

डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् सीमितता से व्यापकता, लघु से महत् और सीमाबद्धता से सीमाहीनता की ओर मानव को अग्रसर करने वाली प्रवृत्ति के समर्थक हैं। व्यक्ति की चेतना उस महत् चेतना का एक अंश है जिसमें सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड, या जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में समाहित है। 'जीवन के अनुभव आग्रही और अविभाज्य इकाई की अभिव्यक्तियां हैं।'

—सूर्यदेव पाण्डेय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह पदार्थ के ही सन्दर्भ में है कि जीवन प्रकाश के लिए व्यग्र होता है। जैविक विज्ञान (biological sciences) एक-कोषीय जीव से स्तनपायियों तक की क्रियाओं का अध्ययन करते हैं। यद्यपि ब्रह्माण्ड के अन्य भागों में भी जीवन की भांति कुछ हो सकता है, जीव-विज्ञानवेत्ता (मुख्यतः) पृथ्वी की सतह, समुद्र तथा वायुमण्डल में जीवन का अध्ययन करते हैं। यद्यपि उच्च श्रेणी के जीव चेतना के स्वरूप का प्रदर्शन करते हैं, किन्तु जैविक विज्ञान इससे सम्बन्धित नहीं होते।

जीवित पदार्थ के व्यवहार में कुछ ऐसा विशेष होता है जो जड़ में नहीं ढूंढ़ा जा सकता। आत्मीकरण, श्वसन, पुनर्जनन, विकास तथा उत्थान की क्रियाएं प्राकृत-रासायनिक (physico-chemical) प्रक्रियाओं से भिन्न हैं। जीवित पदार्थ प्रत्येक परिवर्तन में अपनी विशेष संरचना तथा क्रियाओं को वर्तमान रखता है। आकार की स्थिरता जीवित पदार्थ में उसकी आन्तरिक क्रियाओं द्वारा स्थापित रहती है, न कि वातावरण के परिवर्तन के विपरीत अवरोध द्वारा। उदाहरणस्वरूप श्वसन की क्रिया में जो विधियां अत्यन्त नियमितता से रक्त में आक्सीजन तथा फेफड़ों में कार्बन डाइआक्साइड का दबाव नियन्त्रित करती हैं, वे एक सम्पूर्ण जीवन में सन्तुलन बनाये रखती हैं। सम्पूर्णता का स्वप्न, वस्तु का ज्ञान ही जीवन के विस्तार में एक क्रियाशील प्रभाव है जो कार्यरत है। जीवन गतिशील सन्तुलन है जो स्वयं को स्थिर रखता है। जन्तु (जीवित पदार्थ) के विभिन्न अंग किसी प्राकृत (physical) पदार्थ की तुलना में न्यून रूप से स्वतन्त्र होते हैं। एक भौतिक संरचना से किसी अंग को पृथक् कर देने पर उसके गुणों में विशेष आवश्यक परिवर्तन नहीं होते, जबकि जीवित पदार्थ में स्वरूप संरचना और निर्माता तत्त्व एक-दूसरे पर निर्भर होते हैं। जीवित पदार्थ पूर्ण है, और वह वे सब कार्य करने में समर्थ है जो एक परमाण्विक संस्थान कभी नहीं कर सकता। जीवित पदार्थ अपने अनुभवों के परिणाम सुरक्षित रखते हैं, और इस तरह वे एक आदत का निर्माण करते हैं। बाह्य परिस्थितियों के प्रति वे जो परिवर्तन प्रदर्शित करते हैं, वह उनमें निर्मित होकर सुरक्षित रहता है।

परमाणु न अपने को सुधार सकता है न पुनर्जनन कर सकता है। जीवित पदार्थ अपने को वातावरण के अनुकूल कर लेता है। वह वातावरण के अनुसार क्रिया ही नहीं करता वरन उसका उत्तर भी देता है। जैसे ही जीवित पदार्थ क्षतिग्रस्त होता है, स्वास्थ्यकारी क्रियाएं उसमें होने लगती हैं। पौधा जहां से काट दिया जाता है, कोंपल का प्रस्फुटन वहां से होता है। विकास की क्रिया के अन्तर्गत जो परिवर्तन होते हैं, वे विशेष प्रकार के होते हैं। जीवित पदार्थ के एक भाग में पुनर्जनन की क्रिया प्रारम्भ होती है। अत्यन्त जटिल प्राकृत-रासायनिक संरचना का आनुवंशिक सम्प्रेषण भी होता है। एक रूप में परिवेश जीवित पदार्थ के लिए नवीन (बाहरी) नहीं होता, वह उसके जीवन में समाहित हो जाता है। जीवित पदार्थ अपना पोषण परिवेश के तत्त्वों को ग्रहण करके करता है। ये दो (परिवेश और जीवित पदार्थ) एक-दूसरे में इस तरह समाहित हैं कि इन्हें एक बृहत् पूर्णता की अभिव्यक्ति मान सकते हैं। ये दोनों विशद् स्थितियों में एक-दूसरे से मिले हुए हैं। जीवित पदार्थों में एक विशेष अन्तःनिर्देश होता है जो उनका विकास करता है, क्षतिपूर्ति करता है, और प्रजनन करता है तथा बाह्य परिवेश को अनुकूल करता है। परमाणु के सम्बन्ध में जो कुछ हमारा ज्ञान है वह जीवन-अधीन वर्तमानता की व्याख्या करने में असमर्थ है।

जीवित तथा निर्जीव में प्रमुख अन्तर के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

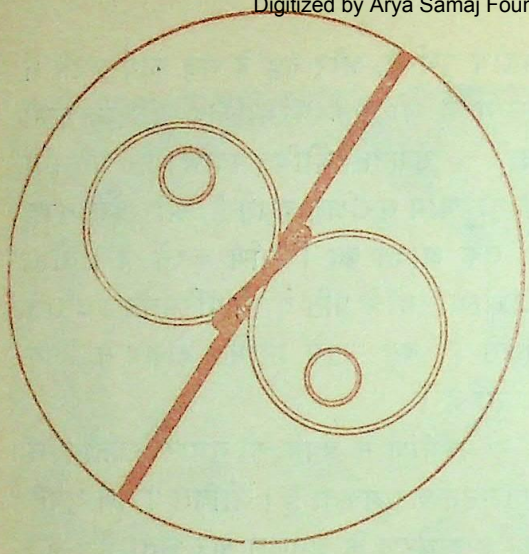

(क)

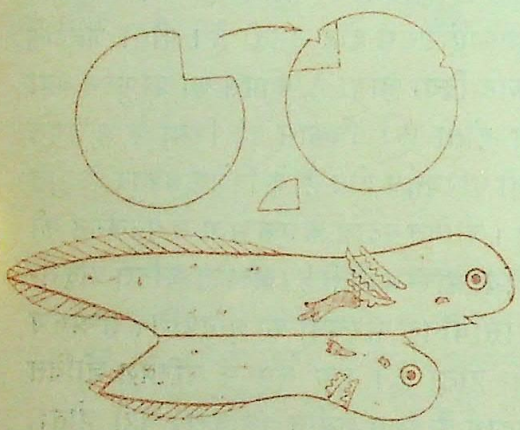

(ख)

प्रायः १८९० में हैन्स ड्रायस्क ने समुद्री अर्किन के अण्डों से सम्बन्धित अपना प्रयोग किया। समुद्री अर्किन एक क्षुद्र जीव है जो सागर तल में रेंगता रहता है। ड्रायस्क ने एक निषेचित अण्डा चुना और उसे दो कोषों में विभाजित कर दिया। यह विच्छेदन उन्होंने मनुष्य के बाल की सहायता से किया था। क्या ये दोनों विच्छेदित कोष आधे-आधे जीव बनेंगे? यदि हां, तो निश्चय ही ये दोनों कोष प्रकृति में पृथक होंगे—(क) किन्तु इस विच्छेदित अण्डे से छोटे आकार के दो पूर्ण जीवों की उत्पत्ति हुई···(ख) हैन्स स्पेमैन का एक प्रयोग : एक भ्रूण से दो सैलामैण्ड्रों की उत्पत्ति

ज्ञान ने कुछ जीव-शास्त्रियों को एक प्राथमिक सिद्धान्त की ओर प्रेरित किया कि यह (नया सिद्धान्त) एनटेलेकी (entelechy) या एक अचेतन 'आत्मा' भौतिक क्रियाओं को नियन्त्रित करती है। आत्माएं या एनटेलेकी जीवित पदार्थों में होती हैं। हैन्स ड्रायस्क इस मत का समर्थन समुद्री अर्किन के अण्डों से सम्बन्धित अपने एक प्रयोग के आधार पर करते हैं जिसके अन्तर्गत अण्डों को विच्छेदित कर दिया गया, फिर भी उनसे छोटे आकार के पूर्ण जीव की उत्पत्ति हुई।

उस मत के विरोध में जो जीवित पदार्थों को यान्त्रिक या प्राकृत-रासायनिक क्रियाओं के संश्लिष्ट स्वीकार करता है, यह जीववादी प्राथमिक सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण है। जीवित पदार्थ का यह विचित्र और विशेष स्वभाव परमाण्विक क्रियाकलापों के सन्दर्भ में नहीं स्वीकारा जा सकता है। जीववाद जीवन की लीला में (उसकी व्याख्या करते हुए) एक अधीन क्रिया को सम्मुख करता है जिसके द्वारा व्यक्ति के अंग एक पूर्ण अस्तित्व की क्रियाओं को वर्तमान रखते हैं। प्रत्येक अंग के विशेष अस्तित्व का कारण उस एक सम्पूर्ण अस्तित्व में निहित होता है। जीवन के अनुभव आग्रही और अविभाज्य इकाई की अभिव्यक्तियां हैं। किन्तु यह महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त कोई अ-भौतिक अस्तित्व नहीं हो सकता जो भौतिक अनुभवों को प्रभावित करे। प्रोफेसर लोयेब ने अपने प्रयोग में दिखाया है कि सुई द्वारा छेदने या किसी अन्य व्यवधान से एक अपरिपक्व अण्डाशय में विभाजन की क्रियाएं तथा अन्य सामान्य विकास हो सकता है जो दूसरी स्थिति में नहीं हो पाता। हमें सुई द्वारा छेदने तथा अन्य अधीनस्थ क्रियाओं में सम्बन्ध का ज्ञान नहीं है। उन्होंने सामान्य जीवों से वेदन तक की क्रियाओं का अध्ययन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिया है, प्रकाश, उष्मा, चाप आदि की निर्दिष्ट क्रियाओं का भी। यह प्रकट है कि प्राकृत-रासायनिक उद्दीपन बहुत-सी महत्त्व-पूर्ण क्रियाओं का सूत्रपात करता है। उत्तर में जीववादी कहते हैं कि यह महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त प्राकृत-रासायनिक कारणों के संयोजन के साथ कार्य करता है। यह एक नियन्त्रक सिद्धान्त है और इसके कार्यरूप में आने के लिए उपयुक्त प्राकृत-रासायनिक प्रक्रियाओं की आवश्यकता है। किन्तु जबकि जीवन भौतिक स्थितियों पर निर्भर है, हम यह नहीं जानते कि भौतिक स्थितियां जीवन को कैसे अस्तित्व में लाती हैं। एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से जीववाद असन्तोषपूर्ण है, तथापि यह जीवन में घटित होने वाली सभी क्रियाओं का अध्ययन करता है। किन्तु इसकी सत्यता हम प्रमाणित नहीं कर सकते। अनुभवद्रष्टा के रूप में हमें तथ्यपूर्ण वक्तव्यों पर निर्भर रहना चाहिये, और प्रकृति की विवेचना उस तरह करनी चाहिये जिस तरह यह जीवन में प्रकट है। जीवित पदार्थों में उनकी संरचना का एक नया संगठन है और उनकी क्रियाओं की एक विशेष अधीनता है, एक विशेष रचना, एक पूर्ण के कार्यों और उद्देश्यों द्वारा प्रेरित सभी अंगों का एक अन्तर्मुखी निश्चय जिसकी भौतिक रूप से कोई व्याख्या नहीं हो सकती। विज्ञान के लिए केवल यही प्रयोजनीय है कि जो अन्त: सम्बन्ध जीव वैज्ञानिक तथ्यों के लिए उद्देश्यपूर्ण हैं, वे भौतिक दृश्यों के लिए उद्देश्यपूर्ण तथ्यों से भिन्न होते हैं।

जीव-विज्ञान जीवन की सम्पूर्ण व्याख्या उपलब्ध नहीं करता, वरन इसे सब व्याख्याओं से परे मानता है। जीवन प्रकृति का एक भाग है और पदार्थ से भिन्न है, फिर भी जीवित पदार्थों के साथ यह सम्भावना रहती है कि उन पर भौतिक या जीव वैज्ञानिक व्याख्याएं चरितार्थ हो सकती हैं।

मूल : अंगरेजी (अनुवाद सू. दे. पा.)

मेरा दिमाग इस समस्या से लड़ रहा है

अचानक हम एक नये युग में आ गये हैं। निश्चय ही प्रत्येक युग नया युग होता है लेकिन, मैं मानता हूँ, यह कहना ठीक होगा कि हमारा युग खास तौर से ऐसा है; और इस युग का प्रतीक परमाणु बम या परमाणु शक्ति है, अगर आप मानना चाहें, पर यह सोचना ज्यादा अच्छा रहेगा कि आज परमाणु शक्ति केवल परमाणु बम के रूप में जानी जाती है। और यदि इस युग का प्रतीक परमाणु बम है, तो इस प्रतीक द्वारा हर चीज निर्धारित है—मनुष्य की विचारधारा, मनुष्य का भय और दूसरी तमाम बातें।

हम इस छाया के नीचे हैं। क्या हम इस गौरवपूर्ण और खूबसूरत सभ्यता के साथ इसकी दोपहर से शाम की ओर बढ़ रहे हैं? क्या हम रचनात्मक चेतना खो चुके हैं? क्या हममें वह शक्ति और विश्वास नहीं है जो सभ्यताओं की शुरुआत में रहता है? क्या हम इस दोपहर के समय में वही चेतना फिर हासिल कर सकते हैं और इसे बदल सकते हैं या यह कि दोपहर के बाद शाम होगी और फिर रात की स्याही हम पर छा जायेगी? मैं नहीं जानता, लेकिन मेरा दिमाग इस समस्या से लड़ रहा है।

—जवाहरलाल नेहरु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास के विद्यार्थियों तथा इतिहास में रुचि रखने वाले प्रत्येक पाठक के लिए एक संग्रहणीय प्रकाशन

हुमायूं

विद्वान इतिहासज्ञ डा. हरिशंकर श्रीवास्तव ने हुमायूं के जीवन पर उपलब्ध सभी फारसी तथा अन्य भाषाओं के ग्रन्थों का अध्ययनकर मुगलकालीन इतिहास के एक चर्चनीय परिच्छेद को प्रस्तुत किया है। महत्त्वपूर्ण युद्धों के मानचित्र, भौगोलिक स्थान, व्यक्तियों के नाम तथा फारसी शब्दों के प्रचलित उच्चारण पुस्तक को और भी उपयोगी बनाते हैं।

कुछ सम्मतियां

It is exceedingly well written in elegant Hindi. You have made use of the original as well as secondary sources of information and produced a scholarly and at the same time an eminently readable work.

—*M.P. Sharma, M.A., D. Litt., Vice Chancellor, University of Saugar*

डा. हरिशंकर श्रीवास्तव की 'हुमायूं' प्रामाणिक आधार पर लिखी हुई एक पठनीय पुस्तक है। पुस्तक की भाषा सुबोध और सुरुचिपूर्ण है।...इतिहास में रुचि लेने वाले पाठकों और स्नातकोत्तर कक्षा के विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक उपयोगी सिद्ध होगी।

—**हीरालाल सिंह, एम.ए., पी.एच-डी. (लन्दन), प्रोफेसर तथा अध्यक्ष, इतिहास विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस**

लगभग ५०० पृष्ठ : डिमाई अठपेजी आकार

बहुरंगी सुनहरा आवरण : मूल्य १५ रुपये

(१५ रुपये का मनीआर्डर प्राप्त होने पर पुस्तक रजिस्ट्री से भेज दी जायेगी। वी. पी. पी. से मंगाने पर डाक व्यय १.५० रुपया अलग से)

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा—३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नोबल पुरस्कार प्राप्त वैज्ञानिक एक अनुष्कोण

ब्रह्मस्वरूप शर्मा

पहला कोण

एडविन मैटीसन मैकमिलन (रसायन)

एडविन का जन्म १८ सितम्बर १९०७ को कैलीफोर्निया के रिर्डोडी बीच नामक स्थान में हुआ था। बचपन से ही उनकी विज्ञान में विशेष रुचि थी। वे एक मेधावी छात्र थे तथा कक्षा में सदा प्रथम स्थान प्राप्त करते थे। स्कूल की शिक्षा पूरी करके उन्होंने १९२५ में कैलीफोर्निया इंस्टीट्यूट आफ टेक्नालाजी में प्रवेश लिया। तीन वर्ष बाद उन्होंने बी.एस. की उपाधि प्रथम श्रेणी में प्राप्त कर ली। अनेक संस्थानों ने उन्हें अपने यहां नियुक्ति देने का प्रस्ताव किया परन्तु एडविन को तो वैज्ञानिक बनने की धुन थी। उन्होंने एम. एस. में प्रवेश लिया और १९२९ में मास्टर आफ साइंस की उपाधि भी प्रथम श्रेणी में प्राप्त की।

उस काल में बहुत कम लोग इतनी उच्च शिक्षा प्राप्त करते थे। अतः एडविन को अमरीका में अच्छी से अच्छी नोकरी प्राप्त हो सकती थी, परन्तु उन्होंने वैज्ञानिक शोध-कार्य करने का निश्चय किया और प्रिंस्टन विश्व-विद्यालय में शोध-छात्र बन गये। अपनी विलक्षण वैज्ञानिक प्रतिभा और परिश्रम के फलस्वरूप उन्हें दो वर्ष बाद ही पी-एच. डी. की उपाधि मिल गयी किन्तु नवयुवक डाक्टर डा. एडविन मैकमिलन की ज्ञान-पिपासा शान्त न हुई। उन्होंने बर्कले विश्वविद्यालय (कैली-फोर्निया) में 'रिसर्च फेलो' के रूप में अपना अनुसन्धान कार्य जारी रखा। तीन वर्ष बाद, १९३५ में, विश्वविद्यालय में ही उन्हें सहायक प्रोफेसर पद पर नियुक्त कर दिया गया।

१९३४ में ही कैलीफोर्निया की विकिरण प्रयोगशाला से उनका निकट सम्पर्क स्थापित हो गया था और वे उसके कार्यों में सक्रिय सहयोग देने लगे थे। १९५४ में वे इस प्रयोग-शाला के सहायक निदेशक बने और अन्ततः १९५८ में इसके मुख्य निदेशक चुने गये।

जब १९३९ में द्वितीय विश्व-युद्ध आरम्भ हुआ तो संसार के सभी प्रमुख वैज्ञानिकों को युद्ध से सम्बन्धित अनुसन्धान कार्यों में लगा दिया गया; अमरीकी सरकार ने डा. एड-विन को 'राडार' और 'सोनार' के सम्बन्ध में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खोज करने का कार्य सौंपा। इसी अवधि में उन्होंने लास अलामोस की परमाणुशक्ति प्रयोगशाला की स्थापना में भी भाग लिया। परमाणु-बम के निर्माण में भी उनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा।

१९४० डा. एडविन के लिए महान् सफलताओं का वर्ष सिद्ध हुआ। इस वर्ष उन्होंने यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों की शृंखला के प्रथम तत्त्व नेप्चूनियम की खोज की। इसके साथ ही उन्होंने अगले तत्त्व प्लूटोनियम की प्राप्ति की दिशा में भी कार्य किया। वास्तव में नेप्चूनियम की खोज ने यूरेनियमवर्गीय अन्य तत्त्वों की खोज का द्वार खोल दिया। इस क्षेत्र में एडविन ने इतना व्यापक अध्ययन किया था कि उनके लेख और शोधपत्र यूरेनियमवर्गीय रसायन-विज्ञान के आधार बन गये। आगे चलकर वे सीबर्ग तथा कुछ अन्य वैज्ञानिकों के साथ प्लूटोनियम की खोज करने में भी सफल हुए।

यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों के विषय में महत्त्वपूर्ण खोजों के लिए डा. एडविन मैकमिलन और डा. सीबर्ग को सम्मिलित रूप से १९५१ का नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया।

'सिंक्रोट्रोन का सिद्धान्त' के नाम से उन्होंने १९४५ में एक सिद्धान्त भी प्रतिपादित किया। परमाणु ऊर्जा का उपयोग करने वाली आधुनिक मशीनों का निर्माण इसी सिद्धान्त के आधार पर किया जाता है। इस सिद्धान्त को १९४५ में ही रूसी वैज्ञानिक व्लादीमीर आई. वेक्सलर ने भी प्रतिपादित किया था, परन्तु यह बात निर्विवाद है कि दोनों वैज्ञानिकों ने इसे पृथक-पृथक रीतियों से, स्वतन्त्र रूप से ज्ञात किया था।

आज विश्व के परमाणु-वैज्ञानिकों में डा. एडविन मैकमिलन का प्रमुख स्थान है। नेप्चूनियम की खोज के लिए डा. मैकमिलन ने जो प्रयोग किया था उसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है : साइक्लोट्रान पत्र पर प्रयोग करते समय उन्होंने लक्ष्य के स्थान पर एक कागज लगाया जिस पर यूरेनियम आक्साइड का हलका-सा लेप किया गया था। इसके पीछे उन्होंने सिगरेट के कागजों का एक गट्ठा लगा दिया था। अब उन्होंने लक्ष्य को न्यूट्रान कणों से वेधित किया और फिर सिगरेट के एक-एक कागज की रेडियोधर्मिता की परीक्षा की। उन्होंने देखा कि कुछ कागजों की रेडियोधर्मिता में अन्तर था।

अनेक बार प्रयोग करने के पश्चात् वे इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि रेडियोधर्मिता में यह अन्तर किसी अन्य अज्ञात तत्त्व की उपस्थिति का प्रमाण है। इस तत्त्व की खोज के लिए उन्होंने वैज्ञानिक फिलिप एच. एबेल्सन के साथ मिलकर कार्य करना आरम्भ किया और अन्ततः नेप्चूनियम प्राप्त करने में सफल हुए।

इसी खोज के साथ उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि नेप्चूनियम के अतिरिक्त अनेक यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों की उपस्थिति भी सम्भव है।

दूसरा कोण

ग्लेन सीबर्ग

(रसायन)

ग्लेन का जन्म १९ अप्रैल १९१२ को इश्पेमिंग (मिशिगन) में हुआ था। ग्लेन की प्रारम्भिक शिक्षा इश्पेमिंग में हुई और फिर उन्हें मिशिगन में एक प्राइवेट स्कूल में भर्ती करा दिया गया। बहुत छोटी आयु से ही ग्लेन की प्रतिभा के प्रमाण मिलने लगे थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कक्षा में पढ़ाये जाने वाले वैज्ञानिक प्रयोगों के अतिरिक्त वे स्वयं भी नये-नये प्रयोग करके अपने मित्रों को दिखाया करते थे। १९ वर्ष की आयु में उन्होंने लास ऐंजिल्स के कालेज में प्रवेश लिया। १९३४ में ए. बी. की उपाधि प्राप्त की। प्रारम्भ से ही उन्हें वैज्ञानिक बनने की लगन थी। अतः अन्य किसी क्षेत्र में अध्ययन करने के बजाय उन्होंने पी-एच. डी. करने का निश्चय किया और बर्कले विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। तीन वर्ष बाद ही वे अपने शोधकार्य में सफल हुए और उन्हें डाक्टर की उपाधि प्रदान की गयी। कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के शोध-सहायक के रूप में उन्होंने अपना अनुसन्धान-कार्य जारी रखा। कुछ समय बाद विश्व-विद्यालय में उन्हें रसायन-विज्ञान के सहायक प्रोफेसर के पद पर नियुक्त कर दिया गया, और फिर कुछ वर्ष बाद वे प्रोफेसर बना दिये गये।

दूसरी ओर कैलीफोर्निया की विकिरण प्रयोगशाला से भी उनका सम्पर्क हुआ और वे उसके कार्यों में सहयोग देने लगे। १९४५ में वे इस प्रयोगशाला के सहायक निदेशक बन गये। आगे चलकर १९५८-१९६१ तक डा. सीबर्ग विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे।

डा. सीबर्ग ने अन्य वैज्ञानिकों के साथ मिलकर डा. एडविन मैकमिलन द्वारा किये हुए कार्य को आगे बढ़ाया। डा. मैक-मिलन ने यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों में प्रथम तत्त्व नेप्चूनियम (सं. ९३) की खोज की थी। सीबर्ग ने (अन्य वैज्ञानिकों के साथ) इसके बाद के आठ तत्त्वों (सं. ९४-१०१) का पता लगाया और उन्हें प्राप्त करने की विधि निर्धारित की।

संश्लेषित यूरेनियमवर्गीय तत्त्वों के निर्माण में सीबर्ग का विशेष योगदान है, जिसके लिए उन्हें १९५१ का नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। रासायनिक तत्त्वों के 'न्यूक्लियस' में 'न्यूट्रान' कणों की वृद्धि करके उनमें कृत्रिम रेडियोधर्मिता उत्पन्न कर दी जाती है। संश्लेषण द्वारा बनाये गये इन तत्त्वों को 'संश्लेषित यूरेनियमवर्गीय तत्त्व' अथवा 'रेडियो आइसोटोप' कहते हैं। ऐसे संश्लेषित रेडियोधर्मी तत्त्वों के गुणों का सीबर्ग ने विस्तृत अध्ययन किया। जनवरी १९४० के 'रिव्यू आफ माडर्न फिजिक्स' में सीबर्ग और जे. लिविंगवुड ने ऐसे तत्त्वों की प्रथम सूची प्रकाशित की। इसमें ३३० रेडियो आइसोटोपों के गुणों का विवरण था।

चार वर्ष बाद सीबर्ग ने अकेले ही उसी 'रिव्यू' में ४२० कृत्रिम रेडियोधर्मी तत्त्वों के गुणों का विवरण प्रकाशित किया। [१९६१ तक ऐसे तत्त्वों की संख्या १,००० से अधिक हो गयी है और तत्त्व संख्या १-१०३ तक सभी के कम से कम एक-दो रेडियो आइसोटोप प्राप्त किये जा चुके हैं।]

द्वितीय महायुद्ध के समय, प्लूटोनियम के औद्योगिक उत्पादन का प्रश्न उठा। वैज्ञानिकों के सामने सबसे जटिल प्रश्न यह था कि प्लूटोनियम को अन्य पदार्थों में से कैसे पृथक किया जाय। उस समय सीबर्ग शिकागो विश्वविद्यालय की धातु-विज्ञान प्रयोगशाला के एक विभाग के प्रमुख थे। उन्होंने प्लूटोनियम के पृथक्कीकरण की रासायनिक विधि निकाली। इस विधि में बिस्मथ फास्फेट और लैंथेनम फ्लोराइड के प्रक्षेप के साथ प्लूटोनियम को अलग किया जाता है।

डा. सीबर्ग की प्रतिभा, विद्वता और योग्यता से प्रभावित होकर १९६१ में राष्ट्रपति केनेडी ने उन्हें अमरीका के परमाणुशक्ति आयोग का अध्यक्ष नियुक्त किया। आज भी वे इस पद कार्य कर रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीसरा कोण

अर्नेस्ट टामस सि. वाल्टन

(भौतिकी)

यूनान, मिस्र और यूरोप के अन्य देशों के रसायनज्ञ सैकड़ों वर्षों तक लोहे को स्वर्ण में परिवर्तित करने के लिए प्रयोग करते रहे और वे सफल न हो सके। परन्तु एक तत्त्व को दूसरे तत्त्व में परिवर्तित करने के आधुनिक प्रयास किसी सीमा तक सफल होते दिखायी दे रहे हैं। रेडियोसक्रिय तत्त्वों से अन्ततः एक सीमा प्राप्त होने की बात अब एक वैज्ञानिक तथ्य है। परमाणुओं की आन्तरिक रचना ज्ञात हो जाने से सैद्धान्तिक रूप में यह बात कही जा सकती है कि किसी तत्त्व के प्रोटान कणों में परिवर्तन करके, अथवा उसके चारों ओर घूमने वाले इलेक्ट्रानों की संख्या में परिवर्तन करके एक तत्त्व को दूसरे तत्त्व में परिवर्तित किया जा सकता है।

परन्तु यह सैद्धान्तिक व्याख्या १९३२ तक एक कल्पित सिद्धान्त ही थी जिसको प्रायोगिक रूप में सिद्ध करने का श्रेय आयरलैण्ड के वैज्ञानिक अर्नेस्ट थामस सिस्टन वाल्टन और इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक जान डगलस काक्क्रोफ्ट को प्राप्त हुआ।

वाल्टन का जन्म ६ अक्टूबर १९०३ को आयरलैण्ड के डिंगारवान कसबे में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा बैनब्रिज में हुई और स्कूल की उच्च कक्षाओं में पढ़ने के लिए उन्हें कुक्सटाउन भेज दिया गया। इसके बाद वाल्टन को बेल्फास्ट के मेथडिस्ट कालिज में पढ़ने का अवसर मिला। यहां उन्हें विज्ञान के उत्तम अध्यापक मिले और किशोर वाल्टन ने स्वयं एक वैज्ञानिक बनने का निश्चय कर लिया। उनकी भौतिक-विज्ञान में विशेष रुचि थी और सत्रह वर्ष की आयु में ही वे विद्युत के जटिल प्रयोग करने लगे। इन प्रयोगों को करने से उनके मन में कुछ वैज्ञानिक प्रश्न उठे जिनके समाधान के प्रयत्न में वे पाठ्यक्रम के अतिरिक्त बड़ी-बड़ी पुस्तकें पढ़ने लगे। १९२२ में उन्होंने डबलिन के ट्रिनिटी कालेज में प्रवेश लिया।

१९२७ में उन्हें वैज्ञानिक शोधकार्य के लिए 'ओवरसीज रिसर्च स्कालरशिप' मिली और वे लार्ड रदरफोर्ड के मार्ग दर्शन में, कैम्ब्रिज के ट्रिनिटी कालेज में शोधकार्य करने लगे। यहीं जान डगलस काक्क्रोफ्ट से उनका सम्पर्क हुआ। १९३० में वाल्टन को एक अन्य 'सीनियर रिसर्च' स्कालरशिप मिल

वाल्टन काक्क्रोफ्ट के परमाणु कणों में वेगवृद्धि करने वाले यंत्र का रेखाचित्र

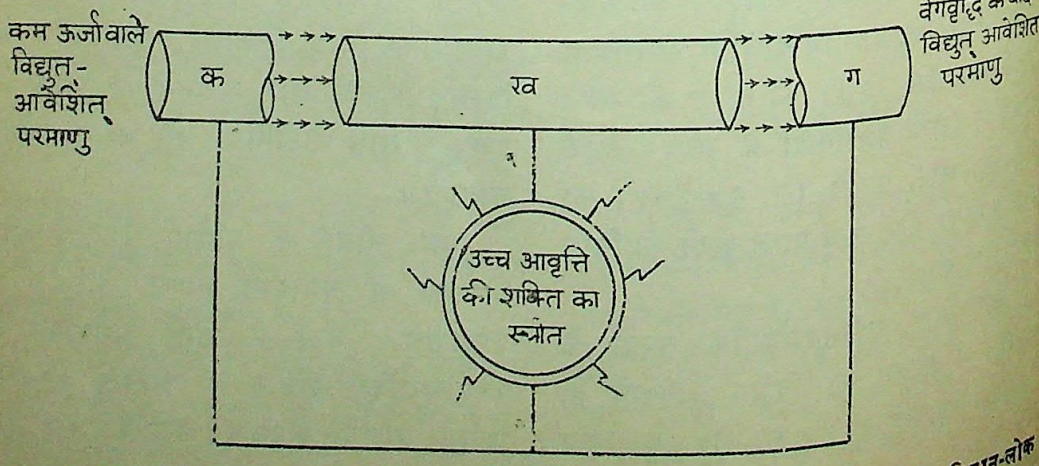

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था। इस बीच वाल्टन और काक्क्रोफ्ट ने सामूहिक रूप से प्रोटान के विच्छेदन के लिए प्रयोग आरम्भ कर दिये और १९३२ में दोनों वैज्ञानिक एक नयी विधि से लीथियम में प्रोटान को विच्छेदित करने में सफल हो गये।

इस विधि में कृत्रिम रीति से परमाणु-कणों (इस विवरण में प्रोटान) की गति तीव्र कर दी जाती है जिसके परिणामस्वरूप प्रोटान विघटित हो जाता है।

वाल्टन और काक्क्रोफ्ट ने जब लीथियम के प्रोटान को वेगवृद्धि की रीति से विघटित किया और बाद में बनने वाले पदार्थ की परीक्षा की तो उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वह लीथियम न था—लीथियम हीलियम में परिवर्तित हो गया था। यह सचमुच एक महान उपलब्धि थी। इस प्रयोग के द्वारा यह सिद्ध हो गया कि एक तत्त्व के परमाणु को दूसरे तत्त्व के परमाणु में परिवर्तित किया जाना सम्भव है।

चौथा कोण

जान डगलस काक्क्रोफ्ट

(भौतिकी)

जान डगलस काक्क्रोफ्ट का जन्म २७ मई १८९७ को यार्कशायर (इंगलैण्ड) के समीप टाडमार्डेन में हुआ था। बाल्यकाल से ही वे बहुत बुद्धिमान थे। उनकी स्कूली शिक्षा टाडमार्डेन सेकेण्ड्री स्कूल में हुई और फिर उन्हें कैम्ब्रिज के सेण्ट जास कालेज में भेजा गया। शीघ्र ही उन्होंने कालेज के विद्यार्थियों और आचार्यों में अपनी योग्यता की धाक जमा दी। १९२७ में वे भी शोध-कार्य के लिए लार्ड रदरफोर्ड के शिष्य बन गये और कैवेंडिश प्रयोगशाला में थामस वाल्टन के साथ उन्होंने प्रयोग आरम्भ कर दिये। पांच वर्ष के अध्ययन और शोध के बाद (वाल्टन के साथ) वे थीलियम को हीलियम में परिवर्तित करने में सफल हो गये।

इस उपलब्धि के बाद भी दोनों वैज्ञानिक शोधकार्य में लगे रहे। १९३२ में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने थामस वाल्टन को क्लर्क मैक्सवेल छात्रवृत्ति प्रदान की और १९३८ में उन्हें इंग्लैण्ड की रायल सोसायटी की ओर से हग का पदक देकर सम्मानित किया गया।

और काक्क्रोफ्ट १९३९ में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प्राचार्य बन गये। १९४१-१९४४ तक वे 'रक्षा अनुसन्धान और विकास प्रतिष्ठान' के मुख्य निरीक्षक रहे। उसके बाद दो वर्ष तक वे कनाडा की 'राष्ट्रीय अनुसन्धान परिषद' के परमाणु शक्ति विभाग के निदेशक (डायरेक्टर) भी रहे। कनाडा से लौटने पर उन्हें इंग्लैण्ड में हार्वेल के परमाणु-शक्ति-अनुसन्धान संस्थान का निदेशक नियुक्त किया गया।

थामस वाल्टन लम्बी अवधि तक अनुसन्धान कार्य करने के पश्चात् १९४६ में डबलिन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर बन गये।

१९५१ की १५ नवम्बर को भौतिक विज्ञान के नोबेल पुरस्कार के लिए अर्नेस्ट थामस वाल्टन और जान डगलस काक्क्रोफ्ट को चुना गया। संसार के समस्त वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया कि १९३२ में इन दोनों के द्वारा एक तत्त्व का दूसरे तत्त्व में परिवर्तित किया जाना एक महान वैज्ञानिक उपलब्धि है। आजकल विशाल और शक्तिशाली विस्फोटक यन्त्र बनाये जा रहे हैं और परमाणु 'न्यूक्लियस' का विघटन एक सामान्य घटना बन गयी है। इस प्रकार वाल्टन और काक्क्रोफ्ट का अनुसन्धान विज्ञान की प्रगति में एक महत्त्वपूर्ण सीमाचिह्न बन गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वैज्ञानिक उपलब्धियां

लघुतम कैमरे से पेट के कैंसर का निदान

अमरीका में एक ऐसी अनोखी विधि का विकास किया गया है जिससे आरम्भ में ही पेट के कैंसर का पता लगाया जा सकता है।

एक छोटा कैमरा जो आकार में छोटी अंगुली की नोक के बराबर है, मुख द्वारा रोगी के पेट में पहुंचा दिया जाता है। एक मिनट से भी कम समय में इस कैमरे से पेट के समूचे भाग के १६ रंगीन चित्र उतर जाते हैं और उन चित्रों को साथ मिलाने पर पेट का लगभग ९५ प्रतिशत भीतरी भाग दिखायी पड़ जाता है।

यह कैमरा रबर की एक महीन रस्सी से जुड़ा रहता है जिसके जरिये उसे रोगी के गले और मुख द्वारा पेट से बाहर निकाल लिया जाता है।

यह उन अनेक प्रयत्नों का नमूना मात्र है जो प्रारम्भिक अवस्थाओं में ही कैंसर का पता लगाने के लिए किये जा रहे हैं।

खराब कानों के लिए अनोखे यन्त्र

बुर्जबर्ग में हाल ही में खराब कानों के लिए एक लघुतम यन्त्र का प्रदर्शन किया गया। इसका वजन केवल ३५ ग्राम है। इसमें एक बैटरी, एक माइक्रोफोन, एक ट्रांजिस्टर, एक वालूम रेगुलेटर तथा कथित ध्वनि ट्रांसफार्मर लगा हुआ है। अनुसन्धान-कर्ताओं ने आशा व्यक्त की है कि भविष्य में इससे भी छोटे यन्त्रों का आविष्कार होगा।

वायु से उर्वरक बनाना

एक अमरीकी रसायनशास्त्री ने सस्ते नाइट्रोजन उर्वरक तैयार करने की विधि मालूम कर ली है। इस खोज से वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि उर्वरक तैयार करने के लिए वायु से सीधी नाइट्रोजन प्राप्त की सकती है। यह उल्लेख्य है कि वायु-मण्डल में अत्यधिक मात्रा में नाइट्रोजन तत्त्व मौजूद हैं।

असीम एवं निर्बाध नाइट्रोजन स्रोत जिसका वजन पृथ्वी के वायुमण्डल के ७५% के बराबर है, मनुष्य की पहुंच के बाहर रहा है। बहुत अधिक दबाव डालकर और अधिक तापमान में इसे मिश्रण में मिलाया जा सकता है, पर इस कार्य में काफी धन व्यय होता है।

किन्तु हाल की खोजों से बड़ी आशा बंधी है। एक ऐसे मिश्रण का पता लगाया जा रहा है जो नाइट्रोजन प्राप्त कराने में सहायक होगा। यह मिश्रण अमोनिया तैयार करने के लिए नाइट्रोजन में मिल जायेगा। उर्वरक तैयार करने के लिए अमोनिया का काफी प्रयोग किया जाता है। आजकल इसे तैयार करने में काफी खर्च आता है, परन्तु उपरोक्त विधि से यह बहुत सस्ता पड़ेगा।

मत गणना करने वाला कम्प्यूटर

हाल ही में पश्चिम जरमनी की हेस प्रान्तीय विधान सभा के चुनाव सम्पन्न हुए। उस चुनाव में लगभग ५,००० मतदान केन्द्र थे, लेकिन अधिकारियों को वहां डाले गये मतपत्रों को गिनने में तथा चुनाव परिणामों की घोषणा करने में मुश्किल से चार घण्टे लगे।

वास्तव में पश्चिम जरमनी के वैज्ञानिकों द्वारा आविष्कृत कम्प्यूटर की सहायता से मतपत्रों को गिनने में केवल एक ही घण्टे का समय लगा। इस कम्प्यूटर का नाम आई वी एम १६२० है और इसके पेनल पर लगे १८० नियन्त्रक प्रकाशों ने ६० मिनट के अन्दर एक कागज निकालकर सामने रख दिया जिसमें चुनाव परिणाम प्रदर्शित था। यह नतीजा बिलकुल ठीक था।

यह कम्प्यूटर पियानो के आकार का है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्रयान द्वारा यात्रा

वाल्टर फ्रोहलिच

चन्द्रमा की प्रथम अमरीकी समानव यात्रा के लिए लगभग पूरी तैयारी हो चुकी है। आशा है यह यात्रा १९६९ में, और यदि सम्भव हुआ तो १९६८ के अन्तिम चरण में ही सम्पन्न हो जायेगी।

इस सम्भावित यात्रा से सम्बन्धित योजना 'अपोलो योजना' के नाम से जानी जाती है।

१९६७ के आरम्भिक चरण में औपचारिक रूप से यह योजना प्रारम्भ हो जायेगी और तीन अन्तरिक्ष यात्री एक विशाल अन्तरिक्षयान में सवार होकर पृथ्वी की परिक्रमा करेंगे।

ये उड़ानें कक्षागत होंगी तथा दो वर्ष तक लगातार जारी रहेंगी। इन उड़ानों के दौरान अन्तरिक्षयात्री अन्तरिक्षयान से भलीभांति परिचित हो जायेंगे और अन्तरिक्ष में उसके संचालन की स्थितियों के अन्तर्गत उसका परीक्षण करने में समर्थ होंगे।

परीक्षण-सम्बन्धी उड़ानों की समाप्ति पृथ्वी से दूर, सृष्टि के अन्तराल में समानव यात्रा के प्रारम्भ की सूचक होगी। इस प्रकार की प्रथम उड़ान चन्द्रमा पर पहुंचने के लिए की जायेगी, और फिर (सम्भावना है) असीम दूरी पर स्थित नक्षत्रों की यात्राएं होंगी।

अपोलो योजना की स्थिति क्या है? अन्तरिक्ष अधिकारियों का कथन है कि वह सन्तोषजनक है। अपोलो अन्तरिक्षयानों के नमूनों द्वारा कई मानवरहित अन्तरिक्ष उड़ानें पूरी हो चुकी हैं। फिर भी ५ लाख मील की उस महत्त्वपूर्ण सप्तदिवसीय यात्रा के लिए कोई तिथि निर्धारित करने से पूर्व अभी कुछ और भी परीक्षण आवश्यक हैं।

तीन खंड : तीन काम

अन्तरिक्ष यात्रा में प्रयुक्त होने वाले अन्तरिक्षयान में तीन खंड सम्मिलित हैं जिन्हें 'मोड्यूल' कहते हैं। पहला खंड 'कमान मोड्यूल' है, जिसमें तीनों अन्तरिक्ष यात्रियों के रहने के लिए स्थान बने होंगे, साथ ही वे उपकरण तथा नियन्त्रण-यन्त्र होंगे जिनकी आवश्यकता उन्हें जीवित रहने और यान को संचालित करने के लिए पड़ेगी।

दूसरा खंड 'सर्विस मोड्यूल' है जिसमें वायुमंडल में पुनः प्रवेश को छोड़कर शेष उड़ान के लिए आवश्यक राकेट इंजन, ईंधन, विद्युदाण्विक उपकरण एवं अन्य सामग्री होगी। 'कमान मोड्यूल' के वायुमंडल में पुनः प्रवेश करने के ठीक पहले 'सर्विस मोड्यूल' को उससे पृथक कर दिया जायेगा।

तीसरा खंड 'लूनर मोड्यूल' है। यह अन्तरिक्षयान का वह भाग है जिसमें तीन अन्तरिक्षयात्रियों में से दो सवार हो जायेंगे। जब दोनों अन्तरिक्षयात्री इस खंड में पहुंच जायेंगे, तो इसे मुख्य यान से पृथक कर दिया जायेगा, ताकि वह चन्द्रमा की सतह पर उतर सके। इस बीच तीसरा अन्तरिक्षयात्री 'कमान मोड्यूल' और 'सर्विस मोड्यूल' के साथ चन्द्रमा की कक्षागत परिक्रमा करता रहेगा। आगे चलकर चन्द्रमा की सतह पर उतरने वाले अन्तरिक्षयात्री 'ल्यूनर मोड्यूल' का प्रयोग करके पुनः परिक्रमा कर रहे 'मोड्यूलों' से आकर मिल जायेंगे।

एक नयी किस्म का अन्तरिक्षयान

अपोलो अन्तरिक्षयान एक पूर्णतया नयी किस्म का अन्तरिक्षयान है। यह जेमिनी यानों की अपेक्षा बहुत बड़ा तथा अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चन्द्रमा के तल पर अनुसन्धान में संलग्न अन्तरिक्ष यात्री (एक कल्पित रेखाचित्र)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जटिल और विकसित यान है। इसमें तीन अन्तरिक्षयात्रियों के रहने के लिए पर्याप्त स्थान है। इसमें तीनों में से प्रत्येक अन्तरिक्षयात्री को अपने शरीर के अवयवों को हिलाने-डुलाने और चलाने के लिए जितनी जगह उपलब्ध है उतनी एक यात्री के लिए मरकरी यान में तथा दो यात्रियों के लिए जेमिनी यान में उपलब्ध नहीं थी।

उड़ान चालू रहने की स्थिति में तीनों अन्तरिक्षयात्री जिन गद्दियों पर बैठेंगे, उनके नीचे दो शयन-स्थल हैं। शयन-स्थल ऐसी बर्थें हैं जिन पर दो अन्तरिक्षयात्री पांव फैलाकर लेट सकते हैं, जबकि तीसरा अन्तरिक्षयात्री चालक की सीट पर बैठा रहेगा। इस अन्तरिक्षयान की अनेक सुविधाओं में एक यह भी है कि इसमें अन्तरिक्षयात्रियों को ठंडा और गरम पानी उपलब्ध होगा।

अपोलो यान वस्तुतः मरकरी और जेमिनी यान की भांति प्रयोगात्मक यान नहीं है। इसका निर्माण पृथ्वी से चलकर अन्तरिक्षयात्रियों को अन्य ग्रहों, विशेष रूप से चन्द्रमा तक पहुंचाने के लिए हुआ है।

चालक

उस प्रथम समानव एवं कक्षागत अपोलो उड़ान के लिए चालकों का चुनाव हो गया है। चालकों को इस समय प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इस टोली के नेता, कमान चालक वर्जिल आई. ग्रिसम होंगे। ग्रिसम को इससे पूर्व की दो सफल अन्तरिक्षयात्राओं का अनुभव प्राप्त है। उन्होंने प्रथम बार १९६१ में १६ मिनट की उपकक्षागत समानव मरकरी उड़ान सम्पन्न की थी, और दूसरी बार २३ मार्च, १९६५ को प्रारम्भ प्रथम समानव जेमिनी उड़ान में भाग लिया था। यह उड़ान ५ घंटे की ३ परिक्रमाओं वाली थी। अपोलो उड़ान पूरी हो जाने पर वे विश्व के प्रथम व्यक्ति होंगे जिसे तीन अन्तरिक्षयात्राएं पूरी करने का गौरव प्राप्त होगा।

टोली के दूसरे अन्तरिक्षयात्री जिनका पद वरिष्ठ चालक का होगा, एडवर्ड एच. ह्वाइट होंगे। यह उनकी दूसरी अन्तरिक्षयात्रा होगी। वे जून १९६५ में सम्पन्न ६२ परिक्रमाओं वाली जेमिनी-४ उड़ान के द्वितीय चालक रह चुके हैं। उस उड़ान के दौरान वे अन्तरिक्षयान से बाहर निकलकर अन्तरिक्ष में पैदल संचरण करने वाले प्रथम अमरीकी बने थे।

टोली के तीसरे सदस्य रोजर बी. चैफी हैं। वे प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे अन्तरिक्ष यात्री हैं। यह उनकी पहली अन्तरिक्ष उड़ान होगी।

यह ऐसी उड़ान होगी जिसमें पहले से इस बात का निर्धारण नहीं किया जायेगा कि यात्रा किस समय समाप्त होगी। यह तब तक जारी रहेगी, जब तक अन्तरिक्षयान के महत्त्वपूर्ण कल-पुरजे ठीक तरह कार्य करते रहेंगे और अन्तरिक्षयात्री स्वस्थ बने रहेंगे।

इतिहास के पृष्ठों पर एक चमत्कारपूर्ण घटना

अन्तरिक्ष अधिकारियों का विश्वास है कि वे अनुभवों और वैज्ञानिक प्रयोगों के रूप में इस उड़ान से अधिकतम परिणाम प्राप्त करने में समर्थ होंगे। यदि अन्तरिक्षयान की यन्त्र प्रणालियां सही-सही काम करती रहीं तो वह सम्भवतः दो सप्ताह या उससे कुछ अधिक समय तक अन्तरिक्ष में रहेगा, बशर्ते कि ईंधन और अन्य सामग्रियां पहले न खत्म हो जायें।

इस प्रारम्भिक कक्षागत उड़ान के बाद इस प्रकार की कई अन्य उड़ानें भी सम्पन्न होंगी जिनके दौरान विभिन्न परीक्षणों की पुनरावृत्ति होगी और नये परीक्षण किये जायेंगे। अन्त में, कक्षा में चन्द्र-यात्रा की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथासम्भव सही-सही नकल करने का प्रयत्न किया जायेगा।

फिर किसी समय १९६९ में वह समय आयेगा जब अपोलो अन्तरिक्षयान को चन्द्रमा तक जाने और वहां से पृथ्वी पर वापस आने वाली ५ लाख मील की लम्बी यात्रा पर भेजा जायेगा। यह पहला अवसर होगा जब मनुष्य पृथ्वी के निकटवर्ती वातावरण से वस्तुतः पृथक होकर पहली बार सही अर्थ में सृष्टि के अन्तराल में पहुंचेगा। निश्चय ही यह सफलता इतिहास के पृष्ठों पर २०वीं शताब्दी की चमत्कारपूर्ण घटना के रूप में अंकित होगी।

जीव वैज्ञानिक भू-उपग्रह का अन्तरिक्ष में रहस्यपूर्ण अन्त

अमरीका के प्रथम जीव वैज्ञानिक उपग्रह का जिसे गत १४ दिसम्बर को अन्तरिक्ष में प्रक्षिप्त किया गया था, अत्यन्त रहस्यपूर्ण ढंग से अन्त हो गया। यह उपग्रह जीव-वैज्ञानिक प्रयोगशाला था जिसमें हजारों कीड़े-मकोड़े, एक-कोषीय जीव और पौधे भरे थे। उसे इस बात का पता लगाने के लिए छोड़ा गया था कि जीवों और पौधों के इन नमूनों पर अन्तरिक्ष यात्रा का क्या प्रभाव पड़ता है।

इस योजना की सफलता उस खोल के पुनर्ग्रहण में निहित थी, जिसमें ये जीव-जन्तु भरे थे। इसे तीन दिनों की कक्ष गत उड़ान के अन्त में हवाई के निकट पुनः ग्रहण करना था। किन्तु इसके बजाय भू-उपग्रह अन्तरिक्ष में विलीन हो गया और उसे पुनः ग्रहण करना सम्भव न हुआ।

७ फुट लम्बा और आधे टन वजन का यह अन्तरिक्षयान केप केनेडी से एक डेल्टा राकेट द्वार प्रक्षिप्त किया गया था। यह १९६६ का ३९वां और अन्तिम प्रक्षेपण था। प्रक्षेपण द्वारा उसे योजनानुसार पृथ्वी से १९९ मील की ऊँचाई पर एक वृत्ताकार कक्षा में पहुंचा दिया गया था।

भू-उपग्रह में जिन नमूनों को रखा गया था, उनकी सूची में फलों पर बैठने वाली १० हजार मक्खियां, १,००० गोबरैले, मेंढक के ५६० अंडे, ८७५ भ्रूण, १३०० कीटाणु-कोष, गेहूँ के ७८ अंकुर, काली मिर्च के ९ पौधे और लाखों जीवाणु सम्मिलित थे।

उड़ान का मुख्य उद्देश्य इस बात का पता लगाना था कि भारहीनता अकेले तथा विकिरण के प्रभाव से युक्त होकर जन्तुओं और पौधों के विकास, आकार और वंश को किस प्रकार प्रभावित करती है। इस प्रकार की जानकारी से ग्रहों तक की समानव उड़ानों के लिए जीव-वैज्ञानिक संकटों का मूल्यांकन करने में सहायता मिलेगी।

उदाहरण के लिए काली मिर्च के पौधों को इस तरह स्थापित किया गया ताकि प्रति १० मिनट पर उनका फोटो खींचा जा सके। उद्देश्य इस बात का निर्धारण करना था कि भारीहनता वाले अन्तरिक्ष में पौधों की पत्तियां चौड़ाई में बढ़ेंगी या नहीं, जैसा कि पृथ्वी पर गुरुत्वाकर्षण के खिचाव के कारण बढ़ती हैं। पौधों की जड़ों का भी अध्ययन इस बात का निर्धारण करने के लिए किया जाने वाला था कि वे नीचे की ओर बढ़ती हैं या किसी अन्य दिशा में।

जिस समय भू-उपग्रह अन्तरिक्ष में परिक्रमा कर रहा था, उस समय उसके किसी पुरजे में विकार का कोई लक्षण नहीं दिखायी पड़ा था। किन्तु ४७वीं परिक्रमा के अन्त में वह अचानक विलुप्त हो गया।

सम्भवतः रेट्रो राकेटों ने भू-उपग्रह को कसी अन्य कक्षा में पहुंचा दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की नयी कृषि

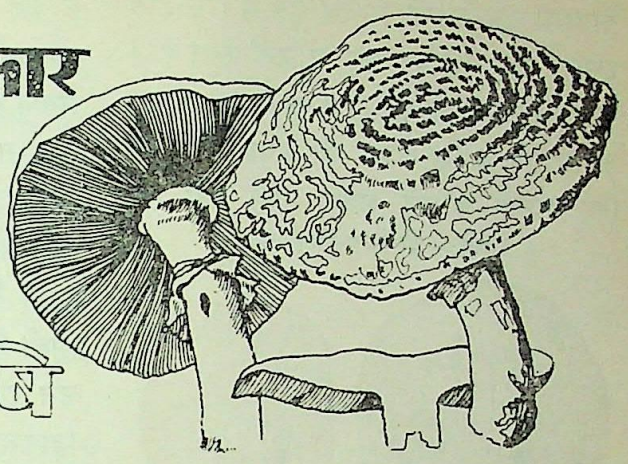

रतनकुमार टण्डन, एम.एस-सी.

उत्तर प्रदेश के अल्मोड़ा प्रान्त में क्षत्रक बहुतायत से पैदा होती है जिसे वहां के निवासी बड़े चाव से खाते हैं। निर्यात की दृष्टि से इसका महत्त्व देखते हुए विवेकानन्द अनुसन्धानशाला को उत्तर प्रदेशीय सरकार ने १९६५-६६ में भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की खेती के लिए १५,००० रुपये का अनुदान दिया जिससे इस ओर वैज्ञानिक प्रयोग किये जा रहे हैं। यह उल्लेखनीय है कि सफलता के परिणाम भी मिले हैं। इनको उगाने के लिए लकड़ी के बक्सों में क्षत्रक की एक विशेष खाद भरकर इसके बीज (जिन्हें स्पान कहते हैं) बोकर एक ठंडे कमरे में (तापमान १६-१८° सेंटीग्रेड) रखकर बराबर पानी देते रहते हैं। जल्दी ही क्षत्रक सभी बक्सों में उग जाते हैं और दिन-प्रतिदिन बड़े होते जाते हैं। जब ये काफी बड़े हो जाते हैं, तो इन्हें तोड़कर बेच देते हैं। क्षत्रक लगभग १० रुपये प्रति किलो के आसानी से बेचे जा सकते हैं। कोई भी व्यवसायी इन्हें इस प्रकार उगाकर एक लघु गृह उद्योग स्थापित करके लाभ उठा सकता है। अमरीका में तो इस प्रकार के लकड़ी के बक्से (१६ × १२ × ७ इंच) लगभग छह डालर प्रति बक्स के हिसाब से बेचे जाते हैं। इन बक्सों को बराबर पानी देना होता है, तथा इन्हें ठंडे कमरे में रखने की आवश्यकता होती है।

एक उत्तम खाद की खोज

साधारण खाद क्षत्रक की कृषि के लिए उपयुक्त नहीं होती। इसके लिए विशेष प्रकार की खाद की जरूरत होती है। विवेकानन्द अनुसन्धानशाला ने इसके लिए एक उत्तम खाद की खोज की है जिसमें घोड़े की लीद इस्तेमाल नहीं की जाती, क्योंकि इस प्रकार की खाद को भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की कृषि के लिए उपयोग करने में लोगों को एतराज होता था, और गन्दगी की वजह से भी इसे उपयुक्त नहीं समझा गया। खाद को पहले कीटाणुरहित कर लिया जाना चाहिये, ताकि क्षत्रक में जहरीला पदार्थ पैदा न हो सके, अन्यथा क्षत्रक भी जहरीले पैदा होंगे जो खाने के प्रयोग में नहीं आ सकते।

यह एक अविश्वसनीय तथ्य है कि केवल जरमनी ने १९६३ ई. में ८०० किलोग्राम क्षत्रक विदेश से मंगायी थी। क्षत्रक का निर्यात देखते हुए इस दिशा में काफी प्रोत्साहन मिला है। आगे चलकर यह एक लाभदायक कुटीर उद्योग साबित हो सकता है।

क्षत्रक ईसा से १००० वर्ष पूर्व भी एक स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ समझा जाता था। इसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उस समय लोग पकाकर खाते थे। रोम के निवासी इसे काफी महत्त्व देते थे। उन्होंने इसका नाम 'ईश्वर का भोजन' रखा था। जूलियस सीजर के शासन काल में ऐसे कानून बनाये गये थे कि क्षत्रक को केवल राजा की सन्तान और बड़े-बड़े लोग ही खा सकते थे लेकिन अब ऐसा कोई बन्धन नहीं है। इन्हें कोई भी उगाकर खा सकता है।

(क) जरमनी के बड़े क्षत्रक, (ख) तथा (ग) क्षत्रक—दो भिन्न-भिन्न काट

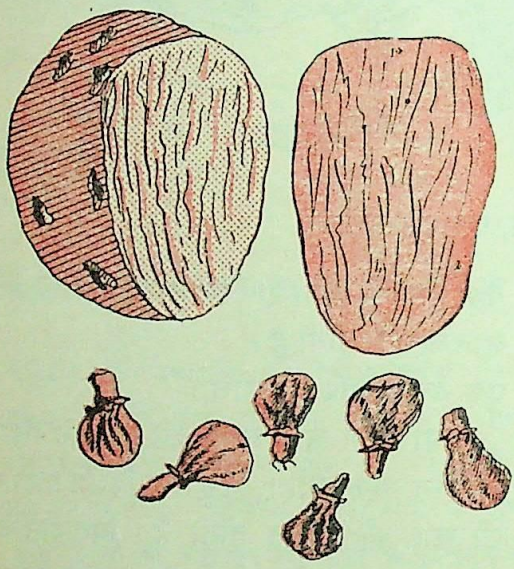

(क)

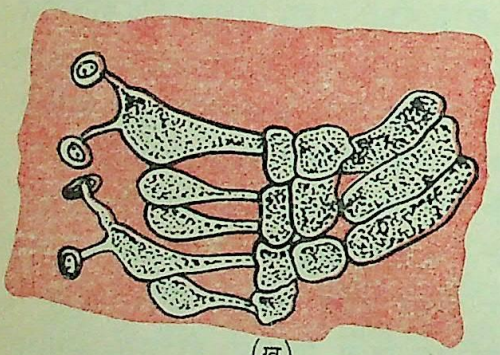

(ख)

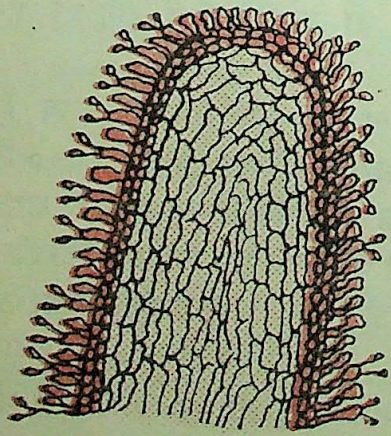

(ग)

लवण और प्रोटीन की सर्वाधिक मात्रा

सब्जियों के विटामिन और प्रोटीन की मात्रा की तुलना करते हुए क्षत्रक में लवण और प्रोटीन की प्रतिशत मात्रा सबसे अधिक होती है, और विटामिन की मात्रा भी काफी होती है। इसमें 'स्टार्च' नहीं होता जिससे यह उन रोगियों के लिए भी फायदेमन्द है जिन्हें 'डायबटीज' है।

क्षत्रक जहरीले और भक्षणीय दोनों प्रकार के होते हैं। इनके चुनाव में विशेष जानकारी आवश्यक है, अन्यथा भयंकर परिणाम हो सकने की सम्भावना रहती है।

बड़े पैमाने पर क्षत्रक उगाने के लिए बड़े-बड़े कमरे बनाकर उनमें तापमान और नमी पर नियन्त्रण रखकर क्षत्रक उगाये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त खाद बनाने के लिए भी ऐसे ही दूसरे कमरे बनाने पड़ते हैं। इनके स्पान (बीज) पैदा करने के लिए भी कमरे बनाने पड़ते हैं।

लन्दन में १९४५ से क्षत्रक उगाने वालों की एक संस्था स्थापित है जिसका कार्यालय एग्रीकलचर हाउस, नाइट ब्रजेस में है। संसार के ४० देशों के लगभग ७५ सदस्य इस संस्था से सम्बद्ध हैं। यह संस्था एक मासिक पत्रिका प्रकाशित करती है। क्षत्रक उगाने के लिए प्रति वर्ष यह संस्था एक प्रदर्शनी और सभा का आयोजन करती है। निस्सन्देह यह संस्था इस दिशा में बड़ा उपयोगी कार्य कर रही है।

क्षत्रक की विभिन्न जातियां

क्षत्रक की एगैरिकस जाति में करीब ७० उपजातियां पायी जाती हैं, जो वर्षा ऋतु में लड़की पर, पेड़ों के तनों पर या सड़ती-गलती चीजों पर उगती देखी जा सकती हैं। इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तिरिक्त भक्षणीय प्रकार के क्षत्रक की लग-
२० उप-जातियां पायी जाती हैं। बहुत-
ऐसी भी किस्में हैं जो जहरीली हैं और
में से १२ जातियां तो अत्यन्त विषैली हैं।
रिकस जाति के क्षत्रक से बिलकुल मिलती-
ती जाति एमैनिटा अत्यन्त विषैली होती
। इसकी पहचान करना कठिन होता है।
ताकि विषैली जाति के निचले भाग में एक
ाले के आकार का अंग होता है, जिसे
ाल वैज्ञानिक ढूंढ़ सकता है।

एक बार चीन की एक सर्कस पार्टी
ारत के कुमाऊं क्षेत्र में अपना खेल दिखाने
ायी थी। उन लोगों में क्षत्रक की तरकारी
ाने का रिवाज था। गलत किस्म में विषैले
त्रक खाने की वजह से उस पार्टी के सैकड़ों
ादमी मृत्यु के शिकार हो गये। इसलिए
हें खाने के पहले भलीभांति पहचान लेना
ावश्यक है।

त्रक की संरचना

भूमि में क्षत्रक पतले-पतले धागे की
ल की जड़ों द्वारा जकड़े रहते हैं। भूमि के
र इनके जो अंग दिखायी देते हैं, वे इनके
ल हैं। इन्हीं को खाया भी जाता है। इनमें
हिस्से होते हैं—एक छोटा-सा डंठल होता
और दूसरा हैट-जैसा छातेनुमा भाग ऊपर
ा दिखायी देता है। जब क्षत्रक छोटा
ता है, तब एक बटन-जैसा गोल या अंडे
शक्ल का होता है। छाते या हैट-जैसे
ग के निचले भाग के नीचे सैकड़ों प्लेट-
े अंग लटकते प्रतीत होते हैं, जो प्रति
त्रक में ३००-६०० की संख्या में होते हैं।
हें गिल्स कहते हैं। इनकी रचना सूक्ष्मदर्शी
रा ही समझी जा सकती है। इसके
तिरिक्त इन प्लेटों के दोनों किनारों पर
ख्य अंडेनुमा स्पोर लगे रहते जो हैं बाद
दूसरे क्षत्रक पैदा करने में सहायक होते हैं।

पश्चिमी जरमनी के क्षत्रक आकार में

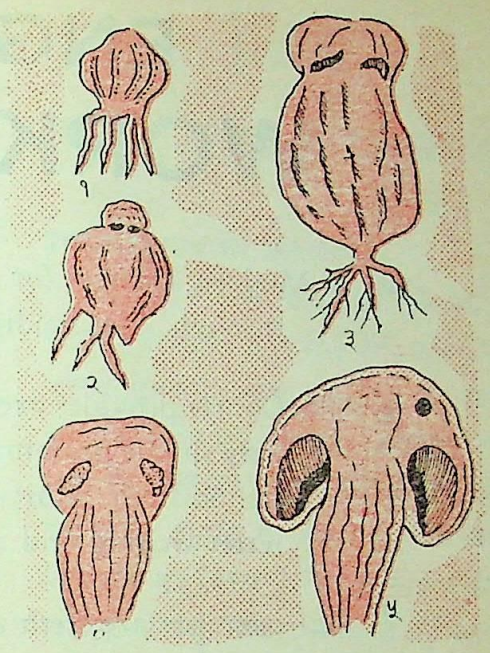

(क)

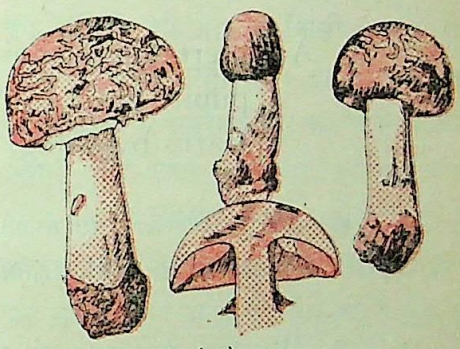

(ख)

(क) क्षत्रक के क्रमिक विकास की विभिन्न अवस्थाएं; (ख) पूर्ण विकसित क्षत्रक

काफी बड़े होते हैं। भारत में पात गोभी जितने बड़े क्षत्रक भी उगाये जाते हैं।

क्षत्रक को आसानी से काटा, उबाला और घी में तला जा सकता है। विदेशों में, विशेषकर पश्चिमी जरमनी में तो यह भोजन की एक शानदार प्लेट समझी जाती है।

उगने के समय क्षत्रक एक छोटा, गोल (नाशपाती की शक्ल का) रूप धारण करता है जिसमें से डंठल और हैट-जैसे अंगों को पृथक नहीं किया जा सकता। धीरे-धीरे बाढ़ आती है और बाद में यह पूर्ण क्षत्रक का रूप धारण कर लेता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ENGLISH WORK BOOK

- A Modern Course for Writing as well as Reading through the medium of Hindi.
- The Course provides exercises in spelling, punctuation, very simple grammar, sentence-structure, picture-composition, story-writing, cross-word puzzles, letter-writing and comprehension.
- The exercises are fresh and original, varied and interesting, and are carefully *graded*.
- An interesting technique is used to teach the young pupil how to write sentences correctly. He learns by doing, and by doing *correctly*.
- Exercises are so arranged that even a slow child is sure to make *rapid progress*.
- Illustrations are given to attract the child's attention and to awaken his interest in the subject.
- The series is based upon a limited vocabulary of 1200 words.
- The Work Books are graded and are suitable for use in middle and high schools.

Book I.....Price : Re. 0·80
Book II.....Price : Re. 1·00
Book III ... .Price : Re. 1·20

For further enquiries please write to :

SRI RAM MEHRA & Co.
EDUCATIONAL PUBLISHERS, AGRA-3

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिच्छू
भयंकर और संकटकारी जीव

सुरजीत

'आवश्यकता है १०,००० जीवित और विषैले बिच्छुओं की। क्या आप इस सम्बन्ध में कुछ सहायता कर सकते हैं ?' यह विज्ञापन १९५१ की वसन्त ऋतु में अरीजोना के एक प्रसिद्ध पत्र 'डेली सिटीजन' में प्रकाशित हुआ। यह घोषणा अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त डाक्टर हर्बर्ट एल. स्टानक की ओर से की गयी थी जो उन दिनों विषनाशक पर अन्वेषण कर रहा था।

तेईस वर्ष के कठोर परिश्रम के बाद डाक्टर स्टानक ने अरीजोना के सदियों पुराने रोग का इलाज खोज लिया था जिसने लाखों-करोड़ों माता-पिताओं की मानसिक शान्ति छीन ली थी। अब इस इलाज को सर्वविदित करने के लिए डाक्टर स्टानक ने यह विज्ञापन दिया था।

अरीजोना उत्तरी अमरीका में स्थित है। यहां बिच्छुओं की बहुत अधिकता है। अनुमान है कि यहां प्रत्येक वर्ष तीन हजार व्यक्तियों को बिच्छू डंस लेते हैं। यहां बिच्छू की चालीस से अधिक किस्में पायी जाती हैं।

डाक्टर स्टानक १९२८ में शिकागो से स्थानान्तरित होकर अरीजोना में रहने लगा। एक वर्ष के बाद उसने वहां शादी कर ली और धीरे-धीरे उन्नति के चरणों को पार करता हुआ अरीजोना स्टेट कालेज में जीव-विज्ञान-विभाग का अध्यक्ष बन गया।

अरीजोना के लोगों की नजर में डाक्टर स्टानक एक सम्माननीय व्यक्ति था, क्योंकि वह बेहद परिश्रमी था। उसने अरीजोना स्टेट कालेज में एक साधारण-सी प्रयोगशाला बना ली थी।

डाक्टर स्टानक का विनाषशक

डाक्टर स्टानक ने बिच्छुओं के डंसने की घटनाएं बहुत सुन रखी थीं। जब उसका अपना बच्चा तीन-चार साल का हुआ, तो स्टानक को हर समय यह विचार चिन्तातुर करने लगा कि कहीं उसके बच्चे को भी कोई बिच्छू डंस न ले। डाक्टर स्टानक ने दृढ़ निश्चय कर लिया कि वह बिच्छू के विष का नाशक अवश्य खोजेगा, किन्तु डाक्टर स्टानक की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी, और कालेज की व्यवस्थापक समिति की ओर से किसी धन के प्राप्त होने की आशा नहीं थी। डाक्टर स्टानक ने अपने हाथों से प्रयोगशाला का सामान तैयार किया और रात-रात भर जागकर जिन्दा और विषैले बिच्छुओं पर प्रयोग किये, और अन्ततः तीस वर्ष के कठोर परिश्रम के पश्चात् वह इस भयंकर जन्तु के विष का नाशक ढूंढ़ने में सफल हो गया।

सबसे पहले उसने यह पता किया कि जीवित बिच्छुओं की दुम से विष को कैसे निचोड़ा जा सकता है। विष निचोड़ लेने के बाद उसने उसे जमाने और फिर उसे द्रव्य में परिवर्तित करने के प्रयोग किये। उसके बाद उसने इस विष को कशीदा पानी में मिलाकर बिल्ली के रक्त में धीरे-धीरे प्रविष्ट किया, यहां तक एक समय ऐसा आया जब बिल्ली पर उसके विष का कुछ प्रभाव न पड़ा। फिर उसने बिल्ली का रक्त निकाला और कई जटिल रासायनिक प्रक्रियाओं से गुजारकर रुधिर-द्रव्य (serum) तैयार किया। यह बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ। अब उसे जीवित बिच्छुओं और धन की आवश्यकता थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९५१ में उसने लोगों के सामने अपने अन्वेषणों का वर्णन किया। अरीजोना के प्रसिद्ध दैनिक 'डेली सिटीजन' ने डाक्टर स्टानक को पूर्ण सहयोग दिया, और उसके विचारों और प्रयोगों को प्रकाशित करके सामान्य जनता तक पहुंचाया। उसी दैनिक ने यह विज्ञापन भी छापा कि डाक्टर स्टानक को धन की आवश्यकता है जिससे वह और सामान खरीदकर बिच्छू के विष का नाशक तैयार कर सके।

विज्ञापन निकलने की देर थी कि चारों ओर से बिच्छुओं से भरे हुए डिब्बे और बोतलें डाक्टर स्टानक की प्रयोगशाला में आने लगीं। २६ जून १९५१ को 'डेली सिटीजन' के सम्पादक ने डाक्टर स्टानक को अपने दफ्तर में बुलाया और ४,५०० डालर का चैक पेश किया। दो दिन के बाद वहां के विधान-निर्माण संस्थान ने १,००० डालर की अमूल्य ग्रांट दी। इस प्रकार डाक्टर स्टानक के पास अच्छा-खासा धन एकत्र हो गया।

इस उदारतापूर्ण आर्थिक सहायता के बदले में डाक्टर स्टानक ने विष-नाशक की बोतलें टस्कन के हैल्थ-सेंटर को भेज दीं। तीन दिन के बाद एक ऐसी चार वर्षीया बच्ची को उस हैल्थ-सेंटर में लाया गया जिसे बिच्छू ने डंस लिया था। डाक्टर स्टानक के तैयार किये हुए विष-नाशक ने उस बच्ची के प्राण बचा लिये।

आजकल डाक्टर स्टानक की तैयार की हुई विषनाशक की बोतलें अरीजोना के प्रत्येक अस्पताल में प्रयुक्त की जाती हैं। बिच्छुओं के विष का नाशक खोजा जा चुका है।

दस इंच लम्बे बिच्छू

जन्तु,जगत में बिच्छू भूमंडल का सबसे प्राचीन वासी हैं। बिच्छू का सम्बन्ध चींटियों-जैसे छोटे-छोटे कीटों और अन्य आठ टांग वाले जीवों के परिवार से है। सारे संसार में उसकी पांच सौ से अधिक विभिन्न किस्में पायी जाती हैं। यद्यपि आकार की ओर से इनमें भेद होता है, किन्तु आकृति में ये एक-से होते हैं। कई बिच्छू तो झींगा मछली से गहरी एक-रूपता रखते हैं।

बिच्छू बड़ा ही भयंकर और संकटकारी होता है। यद्यपि उसके डंसने से मौत तो नहीं होती, किन्तु असहनीय पीड़ा उठानी पड़ती है। एक दुर्बल व्यक्ति शायद उसके डंक से मर भी जाय। बिच्छू की कई किस्मों में से सबसे खतरनाक, विषैला और भयंकर 'काला बिच्छू' होता है जिसकी लम्बाई ६-१० इंच तक होती है और रंगत बहुत स्याह। कहा जाता है कि यह बिच्छू यदि सांप को काट ले, तो वह भी इसके विष से मर जायगा।

सामान्य बिच्छू मटियाले रंग का होता है। उसके मुंह के सामने दो मजबूत और शक्तिशाली अंग शिकंजे की शक्ल के नजर आते हैं, जिन्हें वह सदा ऊपर और सामने भाले की तरह ताने रखता है। ये दोनों अंग झींगा मछली के पंजों से बहुत सीमा तक मिलते-जुलते हैं। बिच्छू का शरीर दो भागों में विभाजित होता है। पहले भाग को उदर का अगला भाग और दूसरे भाग को उदर का पिछला भाग कहते हैं। उसके शरीर की लम्बाई २-६ इंच तक होती है। आकार और लम्बाई की ओर से बिच्छू की हर किस्म में पर्याप्त अन्तर होता है। कई किस्में १३ मिली-ग्राम, (साढ़े तीन इंच) और कुछ १७५ मिलीग्राम (लगभग सात इंच तक) होती हैं। मध्य अमरीका में पाये जाने वाले बिच्छू (९५ मिलीग्राम) की लम्बाई पौने चार इंच होती है। अफ्रीका और दक्षिणी अमरीका में दस इंच की लम्बाई वाले बिच्छू भी देखने में आये हैं।

विष का भंडार दुम के अन्तिम भाग में

उदर का अगला भाग उसका सिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जुड़ा हुआ भाग सीना होता है जिसमें सात वृताकार भाग होते हैं। उदर का पिछला भाग वृत्ताकार टुकड़ों में बंटा हुआ और दुबला-पतला होता है। उदर के पिछले भाग में उसकी दुम होती है, जिसके अन्तिम सिरे पर एक छोटी-सी विष की थैली होती है। उस थैली के मुंह पर एक सख्त झुकावदार और नुकीला कांटा होता है, यही डंक है। इसका झुकाव इस प्रकार का होता है कि जब तक बिच्छू अपने उदर के पिछले भाग को ऊपर न उठाये, डंक काम नहीं देगा। डंक मारने के लिए उसे अपने शरीर के पिछले भाग को ऊपर उठाकर आगे फेंकना पड़ता है। उसके डंक में एक छोटा-सा सूराख होता है जिसके द्वारा वह अपने शिकार के शरीर में विष को प्रविष्ट कर देता है। विष का भंडार दुम के अन्तिम भाग में एकत्र होता है। उसके गलफड़ों के ढकने के पीछे कंघियों का एक जोड़ा होता है। यह अंग बिच्छू के सिवा किसी अन्य जीव में नहीं देखा गया। उदर के अगले भाग में २-५ और कई परिस्थितियों में ८ आंखें होती हैं। उसका मुंह मेदे की ओर, अगले और पिछले होंठों के बीच होता है। उसके मुंह के सामने जो दो अंग शिकंजे के रूप में होते हैं, उनके द्वारा वह अपना भोजन ढूंढ़ता है।

बिच्छू की आठ टांगें होती हैं। टांगों के पहले चार जोड़े प्लेटों के रूप में होते हैं। जब बिच्छू कुछ खाना चाहता है, तो सबसे पहले अपने शिकार को शिकंजे रूपी अंगों से मजबूती से जकड़ लेता है। फिर उसे मारना शुरू कर देता है और उसे अपने खोल के नीचे लेकर खूब जोर से रगड़ता है, यहां तक कि वह शिकार दुर्बल हो जाता है। उसके बाद बिच्छू शिकार के शरीर में जख्म पैदा करता है और फिर रासायनिक प्रक्रिया पैदा करने वाले प्रोटीन प्रविष्ट करता है। इन प्रोटीनों के प्रभाव से शिकार का शरीर बिलकुल द्रव्यावस्था में बदल जाता है। उसके बाद बिच्छू अपने गले से हवा निकालता है जो उस द्रव्य को खुश्क और ठोस बना देती है। उसके बाद वह उसे खा जाता है। इस सम्बन्ध में सबसे रोचक बात यह है कि बिच्छू का गला पम्प अर्थात हवा खारिज करने और छलनी (अर्थात साफ करने) के काम भी आता है। इस छलनी के द्वारा वह शिकार के उस प्रत्येक भाग को पेट में प्रवेश करने नहीं देता जो उसकी पाचन व्यवस्था में खराबी पैदा करने का कारण हो। हड्डियों के सिवा बिच्छू अपने शिकार का सारा शरीर चट कर जाता है। मेदे में प्रवेश करने के बाद भोजन को कई पड़ावों से गुजरना पड़ता है। सबसे पहले यह भोजन अंतड़ियों में जाता है। इस पड़ाव पर बिच्छू की पाचन-व्यवस्था की ग्रन्थियां और विशेष रगें उसमें रासायनिक प्रक्रिया पैदा करने वाले प्रोटीन शामिल करके भोजन को पाचनीय बना देते हैं। फ़ालतू भोजन विष्ठा के रास्ते जो दुम के अन्त पर डंक से जरा आगे होता है, निकलता रहता है।

भूखे रहने का आदी

छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़े बिच्छू का प्रिय भोजन हैं। चींटियां और घास के नन्हे-मुन्ने कीड़े भी उसका मन-भाता खाना हैं। यह बात मानी हुई है कि बिच्छू भूखे रहने का बहुत आदी है। एक अनुमान के अनुसार बिच्छू एक वर्ष से अधिक समय तक बिना किसी आहार के जिन्दा रह सकता है। जो बिच्छू नमी वाले प्रदेश में रहते हैं उन्हें पानी की अधिक आवश्यकता होती है, पर जंगल में पाये जाने वाले बिच्छू पानी के बिना कई-कई महीनों तक जीवित रह सकते हैं।

प्राय: बिच्छू स्वभाव से बड़ा लजीला,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एकान्त-प्रिय, समझौता-प्रेमी और रात को घूमने-फिरने का आदी होता है। दिन के समय विश्रामप्रिय और आलसी बन जाता है। उसकी नेत्र-शक्ति कमजोर पड़ जाती है। शिकार की खोज में वह रात के समय निकलता है। दिन के समय वह अंधेरे और मलीन स्थानों में सिर छुपाकर बैठा रहता है।

यूरोप में कई ऐसे देश हैं जहां मकानों के इर्द-गिर्द चारदीवारी नहीं होती। वहां पर बिच्छू रात को कमरों में प्रवेश कर जाते हैं और छोटी-छोटी दरारों, तकियों के नीचे या जूतों में घुस जाते हैं। वहां के लोग हर समय उनसे भयभीत रहते हैं। कई बार तो वे चारपाई पर लेटे हुए व्यक्ति को डंक मार देते हैं।

तरल और शीत स्थान तो बिच्छू के मनचाहे स्थान हैं। शुष्क ऋतु या ग्रीष्म ऋतु में वे जमीन के अन्दर सूराख करके मौन और शान्त जीवन बिताते हैं तथा बहुत कम देखने में आते हैं। जैसे ही वर्षा ऋतु आरम्भ होती है, वे जमीन की सतह पर प्रकट होने लगते हैं। छोटे-छोटे पत्थरों के नीचे छिपकर शिकार की घात में बैठ जाते हैं।

अत्यन्त सादा सामान्य जीवन

बिच्छू का सामान्य जीवन बड़ा सादा होता है। सभी जातियों में आपसी मेल-जोल के सम्बन्ध बिलकुल नहीं पाये जाते। हर बिच्छू आत्मनिर्भर और स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करता है और दूसरों से मिलते हुए लजाता और झिझकता है। कभी-कभार एक-दूसरे से उनका आमना-सामना हो जाय, तो वे लड़ने लगते हैं। लड़ाई के बाद विजेता अपने पराजित को हड़प जाता है। किन्तु यदि उनमें कुछ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध पाये जाते हों, तो वे अजीब बेढंगेपन से एक-दूसरे को 'हेलो' कहकर हाथ भी मिलाते हैं। हाथ मिलाने के लिए उनके मुंह के आगे लगे हुए शिकंजे के रूप के अंग काम देते हैं। बड़े-बड़े पिंजरों में बहुत से बिच्छू रखे जा सकते हैं, बशर्ते कि उनमें से कोई बिच्छू दूसरे बिच्छू की 'सीमा' में हस्तक्षेप न करे। यदि पिंजरा छोटा हो, तो एक समय में एक ही बिच्छू रखा जा सकता है, नहीं तो एक दूसरे से लड़-भिड़कर समाप्त हो जायेंगे, और वही बिच्छू जीवित बचेगा जो उनमें से अधिक शक्तिशाली होगा। बिच्छुओं के समाज में 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' का विधान लागू होता है।

बिच्छू जैसे ही युवावस्था में पहुंचता है, उसका खोल उतरने लगता है। इसे पूर्ण पतन कहा जाता है। यह पूर्ण पतन टांगों, सिर, मुंह और सीना, सारांश यह कि शरीर के सभी भागों पर होता है। बिच्छू के वयस्क होने पर ही उसका लिंग पहचाना जा सकता है। नर बिच्छू की दुम लम्बी और शरीर दुबला-पतला होता है। इसके प्रतिकूल मादा की दुम छोटी और शरीर अपेक्षाकृत स्थूल होता है। नर बिच्छू के मेदे के नीचे दो अंग होते हैं। ये अंग बिच्छू को उलटा करके देखे जाते हैं। सम्भोग के तुरन्त बाद मादा नर पर हमला कर देती है और यदि नर दुम दबाकर भाग न जाये, तो वह उसे हड़प जाती है। सम्भोग के कुछ घंटों के बाद मादा के पेट में छोटे-छोटे अंडे पैदा होने लगते हैं, जिनसे सप्ताह के अन्दर छोटे-छोटे जीवित बच्चे जन्म लेते हैं। उनकी संख्या ३०-६० तक होती है। इन बच्चों में जन्म के समय से ही वे सभी गुण पाये जाते हैं, जो बिच्छू में होते हैं, पर इनका आकार अपने माता-पिता से भिन्न होता है। इस पड़ाव में इन बच्चों के गले में अंडे की जर्दी-जैसा लसदार पदार्थ पाया जाता है जिसके कारण वे न तो खा-पी सकते हैं, और न उन्हें खाने की आवश्यकता होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

70253

बहुत नाजुक और बेबस होते हैं। जन्म के बाद उनकी मां बहुत सावधानी बरतती है और उन्हें अपनी कमर पर एक सप्ताह तक लटकाये फिरती है। उसकी कमर के ऊपर एक थैली-सी बनी होती है जिसमें बच्चे रहते हैं और एक सप्ताह तक वे गले में पड़े हुए रसदार पदार्थ पर गुजारा करते हैं। सरसरी नजर में ये बिच्छू उस थैली में से नजर नहीं आते पर उनकी टांगें और शिकंजे-जैसे अंग देखे जा सकते हैं। उस एक सप्ताह के मध्य में उनकी मां उन्हें कुछ खिलाती-पिलाती है। पहले पूर्ण पतन के साथ ही जो एक सप्ताह के बाद आरम्भ होता है, उनका शरीर एक वयस्क बिच्छू का निकल आता है और उसके बाद वे अपनी मां की पीठ पर से सदा के लिए उतर आते हैं और स्वतन्त्र जीवन जीना आरम्भ कर देते हैं। इस समय वह रसदार पदार्थ समाप्त हो चुका होता है। अब उन्हें भूख अनुभव होती है। वे अपने आहार ढूंढने के लिए मारे-मारे फिरने लगते हैं।

बिच्छू धूप और गरमी से घबराते हैं

काले बिच्छू के डंसने के बाद मनुष्य के अंग ढीले और नीले पड़ जाते हैं और कई बार मौत भी हो जाती है।

बिच्छू से उसका शुद्ध विष विद्युत द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। यह विष पानी या ग्लिसरीन में घुलाया जा सकता है। उत्तरी अफ्रीका के एक बिच्छू के विष में ०-२५ प्रतिशत तक ऐसा पदार्थ होता है जो खुश्क होने पर ठोस बन जाता है। यह ठोस पदार्थ न प्रोटीन से मिलता-जुलता है, न मोम से। यदि इसे आध घंटे तक उबाला जाय तो सभी विषैले कीटाणु नष्ट हो जाते हैं।

बिच्छू के डंस लेने का असर यह होता है कि डंसी हुई जगह पर तेज दर्द होता है और वह जगह बिलकुल सुन्न हो जाती है। कई बार वहां पर जलन भी होती है, और वह जगह पत्थर की तरह कठोर हो जाती है। उसका दर्द 'भंवर' की अवस्था में होता है।

स्थानीय विष वाले बिच्छू का दर्द चौबीस घंटे तक रहता है पर उस जगह की सूजन और जलन दो घंटे में खत्म हो जाती है। इस प्रकार के बिच्छू के डंक से मानवीय जीवन को, बस, इतना ही संकट होता है, जितना एक भिड़ के काट लेने से।

बिच्छू धूप और गरमी से बहुत घबराते हैं और यदि कभी किसी ऐसे डब्बे में उन्हें बन्द कर दिया जाय जिसमें गरमी हो तो ये तुरन्त ही मर जायेंगे। चिल-चिलाती धूप में उसे कुछ मिनट रखने से उसकी मौत हो जाती है। प्रायः यह देखने में आया है कि जब उसे धूप में रखते हैं, तो पहले-पहल वह इधर-उधर भागने का प्रयत्न करेगा, ताकि कहीं कोई शीतल छाया मिल जाय, पर थक-हारकर वह उन्मत्तता से अपने-आप पर डंक

मादा की पीठ पर सवार हर सन्तान मानव-शत्रु है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मारने लगता है और सदा-सदा के लिए समाप्त हो जाता है।

यद्यपि बिच्छू मनुष्य और कई जानवरों का शत्रु है पर प्रकृति ने उसके भी बहुत से शत्रु पैदा कर रखे हैं जो उसे मार डालते हैं। मैक्सीको के गरम जंगलों और मध्य अमरीका में चींटियों की सेना की सेना उन पर पिल पड़ती है और क्षण भर में बिच्छू तितर-बितर हो जाते हैं। अफ्रीका के बन्दर उनकी दुम को अलग करके शेष शरीर को मजे लेकर हड़प लेते हैं। अल्जीरिया में कुछ लोग जिन्दा बिच्छू बड़े शौक से खाते हैं। एरीजोना में मुरगी के चूजे अपनी चोंच से बिच्छुओं को मार डालते हैं। काली चींटी उसकी सबसे बड़ी शत्रु है। यद्यपि बिच्छू कभी उसके काबू में नहीं आता पर भूले से यदि वह उसके हत्थे चढ़ जाय, तो फिर उसका बच निकलना कठिन हो जाता है।

कृत्रिम बिच्छू

'कृत्रिम बिच्छू' बनाना हो, तो उसके लिए बहुत ही दिलचस्प और आसान तरीका यह है कि थोड़ी सी गोबर और लस्सी मिलाकर उसे एक बरतन में डाल लें। फिर उस बरतन का मुंह अच्छी तरह बन्द करके गोबर के ढेर में दफ्न कर दें। एक सप्ताह के बाद उस बरतन को निकाल लें। यह बिच्छुओं से भरा होगा।

बिच्छू के विष के इलाज का सबसे अच्छा नुसखा यह है कि कुछ जिन्दा या मुरदा बिच्छुओं को सरसों के तेल में डालकर एक बोतल में बन्द कर रखें और जिस जगह बिच्छू ने काटा हो, वहां पर यह तेल लगा दें। तुरन्त यह महसूस होगा, मानो किसी ने बर्फ की पट्टी लगा दी है। यह प्रक्रिया दोहराने से पीड़ा में सन्तोषजनक कमी हो जायेगी। इसके अलावा नीबू का सत पानी में मिलाकर बिच्छू की काटी हुई जगह पर लगाने से भी काफी फायदा हो जाता है।

इसका सर्वोत्तम इलाज तम्बाकू की राख, द्रव्यावस्था में नौसादर, पिघली हुई चर्बी, नीबू का सत या पोटाशियम परमेंगनेट हैं। इन सभी वस्तुओं में से जो भी उपलब्ध हो, उसे बिच्छू के डंसे हुए स्थान पर लगाने से ठंड पड़ जाती है।

अमोनिया सुंघाने से भी रोगी को पीड़ा में कमी महसूस होती है। बिच्छू के डंसे हुए जख्म से विष निकालने के लिए लोहे की बड़ी-सी चाबी या पिस्तौल की नाली को उस स्थान पर जोर से मलना चाहिये। इससे भी विष की तीव्रता कम हो जाती है।

चिपकने वाले प्लास्टिक

अमरीका में एक ऐसी प्रक्रिया के बारे में प्रयोग किये जा रहे हैं जिससे कुछ किस्म के प्लास्टिकों को चिपकाने वाले पदार्थ का इस्तेमाल करके दूसरे पदार्थों के साथ मजबूती से जोड़ा जा सके। इस प्रक्रिया से यह ज्ञात हुआ है कि चीजें आपस में कैसे जुड़ती हैं।

टेलीफोन और पालिथिलीन-जैसे बहुत से चिकने प्लास्टिक इस नयी प्रक्रिया से चिपकने लायक बनाये जा सकते हैं। इस तरह के प्लास्टिक किसी चीज में मुश्किल से चिपकते हैं। उन्हें किसी भी लेसदार पदार्थ के जरिये किसी दूसरी वस्तु में तब तक ठीक से नहीं चिपकाया जा सकता जब तक कि वे उसके लिए रासायनिक ढंग से तैयार न किये जायें।

यह उल्लेखनीय है कि इस प्रकार की तैयारी से प्लास्टिक के रूप-गुण में अन्तर आ जाता है।

विज्ञान-लोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धान

भारत का प्रमुख खाद्यान्न

नरेन्द्र छाबड़ा

धान भारत का मुख्य खाद्यान्न है। भारत की तीन-चौथाई जनसंख्या इस पर निर्भर है। संसार भर में धान की पैदावार में भारत का प्रमुख स्थान है और लगभग ३१६ लाख हेक्टर (७८२·८३ लाख एकड़) भूमि में यह उगाया जाता है, दूसरे शब्दों में यह कि संसार भर की लगभग ३० प्रतिशत पैदावार अकेले इस देश में होती है।

धान हमारे देश की दूसरी प्रमुख फसल है, पहला स्थान गेहूं का है। फिर भी हमारे देश में धान की कमी है, यही कारण है कि हमें चावल दूसरे देशों से मंगवाना पड़ता है। हमारे देश में चावल बहुतायत से खाया जाता है। पश्चिमी बंगाल, मद्रास, केरल, आंध्र प्रदेश, असम, मध्य प्रदेश और बिहार के लोगों का तो यह मुख्य भोजन है। यह उल्लेख्य है कि धान की पैदावार हमारे देश में निरन्तर बढ़ रही है, जैसे गत वर्ष अर्थात् १९६५ में धान की कुल पैदावार ३ करोड़ ८७ लाख टन थी, जब-कि १९५१ में केवल २ करोड़ ६ लाख टन थी। कुल मिलाकर पिछले कई वर्षों में धान की खेती के क्षेत्रफल में १७ प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस समय भारत में एक हेक्टर भूमि में १०७४ किलोग्राम धान की उपज होती है। यह आंकड़ा अनुमानित है।

धान भारत ही नहीं, संसार की अधिकांश जनसंख्या का मुख्य आहार है। लगभग १ अरब १० करोड़ लोग चावल खाकर जीते हैं। संसार भर में लगभग २६६० लाख एकड़ भूमि में धान की खेती होती है और करीब १३०० लाख टन चावल (polished rice) खाने के लिए प्रति वर्ष प्राप्त होता है। धान मुख्यतः एशिया की फसल है—वह भी दक्षिण-पूर्वी एशिया की, और इसकी पैदावार का क्षेत्र भारत-पाकिस्तान से लेकर जापान तक फैला हुआ है। मुख्य देश हैं—भारत, चीन, पाकिस्तान, इंडोनेशिया, थाइलैंड, बर्मा, जापान, ताइवान, मलेशिया, कोरिया। अन्य देश हैं—मिस्र, इटली, स्पेन, अमरीका, इत्यादि। भारत-जैसे एशिया के कई देश धान का घर होते हुए भी चावल की कमी अनुभव करते रहते हैं। परन्तु बर्मा, इंडोचीन और थाइलैंड इतना धान पैदा कर लेते हैं कि वे अपनी जरूरत पूरी करने के बाद उसमें से कुछ निर्यात भी कर लेते हैं। इंडोनेशिया, मलेशिया और ताइवान केवल अपनी जरूरत पूरी कर लेते हैं। परन्तु भारत में धान की उपज आवश्यकता से कम होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धान : एक उष्णकटिबन्धीय (tropical) फसल

धान मुख्य रूप से एक उष्ण-कटिबन्धीय फसल है, पर इसके उगने के लिए अति गरम (high temperature) और तर मौसम (humidity) चाहिये। भारत में यह फसल समुद्र तट के प्रदेशों से लेकर हिमालय पर्वत के ढालों पर ३,००० फुट से ५,००० फुट तक की ऊंचाई पर उगायी जाती है। इस के लिए पर्याप्त जल की आवश्यकता होती है। हमारे देश में लगभग सभी राज्यों में धान उगाया जाता है, परन्तु प्रमुख क्षेत्र आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, महाराष्ट्र, केरल, मध्य प्रदेश, मद्रास, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश और पश्चिमी बंगाल में नदियों की घाटियां आदि हैं। कश्मीर की घाटी में भी अच्छी किस्म का चावल उगाया जाता है। सम्पूर्ण देश में सर्वाधिक पैदावार पश्चिमी बंगाल और उसके बाद मध्य प्रदेश में होती है।

धान मुख्यत: पानी की फसल है। धान के पौधों के उगने और बढ़ने के लिए खेत में पानी भरा रहना जरूरी है। यही कारण है कि अधिकांश फसल मानसून की वर्षा पर निर्भर करती है। जहां वर्ष-भर में ८० इंच से अधिक वर्षा होती है, वहां धान की फसल सर्वोत्तम और भरपूर होती है। पर जिन प्रदेशों में वर्षा ३० इंच से कम होती है, वहां यह फसल सिंचाई पर आश्रित होती है। धान के लिए भारी दुमट (heavy loamy) मिट्टी सर्वोत्तम पायी गयी है। ऐसी मिट्टी में पानी सोखने की शक्ति होती है, जो धान के लिए लाभदायक रहती है। देश के विभिन्न मौसमों स्थानीय तापमान और वर्षा के अनुपात के अनुसार धान की फसल की तीन बुआइयां (sowings) और तीन कटाइयां (harvastings) की जाती हैं। पहली बुआई अप्रैल-जून में और कटाई अगस्त-नवम्बर में की जाती है। दूसरी (शीतकालीन) बुआई जून-अगस्त और कटाई अक्तूबर-जनवरी में और तीसरी (ग्रीष्मकालीन) बुआई नवम्बर-जनवरी में की जाती है। फसल मार्च-अप्रैल में पकती है। धान की फसल प्राय: ९० दिनों से १६० दिनों में पककर तैयार हो जाती है। फिर भी यह अवधि मुख्यत: धान की किस्म और बुआई के तरीकों पर निर्भर करती है।

पानी से भरे खेत में हल चलाकर बीज बोते हैं

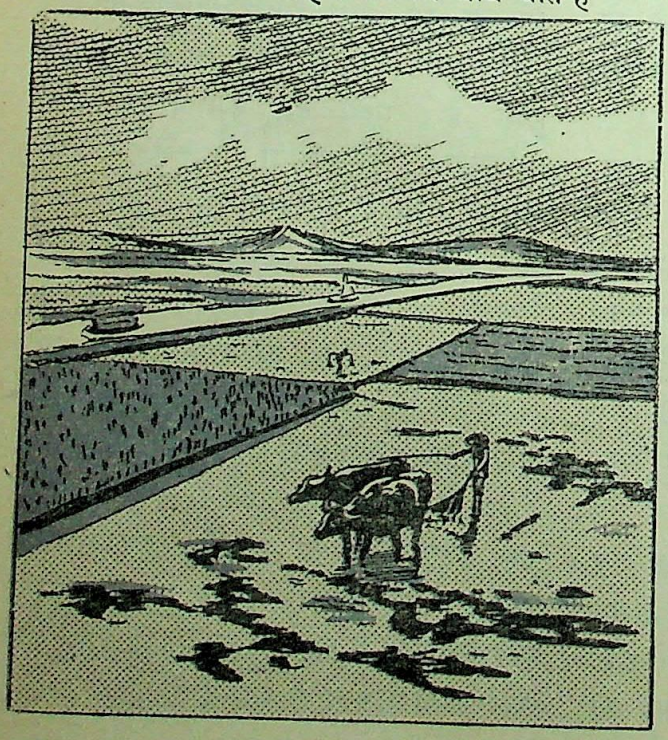

धान बोने के कई तरीके हैं। पानी से भरे खेत में हल चलाकर और बीज छिटककर बोना (broad-casting method) भी एक महत्त्व-पूर्ण तरीका है। एक अन्य तरीके में पहले नर्सरियों में (nurseries) में पौद (seedlings) उगाते हैं, फिर उस पौद को हल चले खेतों में कतारों में रोपा जाता है। इसे रोपाई विधि (transplanting method) कहते हैं। रोपाई के तरीके से उगायी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विश्व के विभिन्न देशों में धान उत्पन्न करने वाले क्षेत्र

यी फसल भरपूर होती है। इसमें पौधों और तारों के बीच ६ × ६ इंच का फासला खा जाता है।

धान की अच्छी पैदावार के लिए इसकी सलों में हरी खादों (green manures) और रासायनिक खादों (fertilizers) का प्रयोग किया जाता है। इसके लिए नत्र-जनीय खादें (nitrogenous fertilizers & manures) विशेष उपयोगी सिद्ध हुई हैं। एक एकड़ में औसतन ४० पौंड खाद डाली जाती है। केन्द्रीय चावल अनुसन्धानशाला, कटक (उड़ीसा) में परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि अमोनियम सल्फेट के प्रयोग से फसल को पर्याप्त लाभ पहुंचता है। हरी खादें (हरी झाड़ियां, पत्ते, ढेंचा, सैनहैंप आदि से बनी खाद) और अमोनियम सल्फेट के प्रयोग से भूमि को नत्रजन पहुंचता है जो धान की फसल की बढ़वार के लिए अति उपयोगी है। बम्बई और मैसूर के कुछ जिलों में सूखा गोबर, पेड़ों के पत्ते, शाखाएं, झाड़ियां आदि खेत में जलाकर उनकी राख को खाद के रूप में खेतों में डालते हैं। कहीं-कहीं हड्डी का चूरा भी खाद के रूप में डाला जाता है।

पकी फसल की पहचान यह है कि जब धान की बालियां (ears) पक जायें और पौधे जरा हलके हरे हों, ऐसी अवस्था में फसल की कटाई कर लेनी चाहिये। यदि धान के दाने खेत में ही खड़े-खड़े बिलकुल पक जायें, तो उनको हानि पहुंचने की सम्भावना रहती है। धान की फसल दातृओं (sickles) से काटी जाती है। फिर तीन-चार दिन तक खेत में ही सुखायी जाती है। इसके बाद एक-दो सप्ताह तक गहाई के स्थान पर पड़ी रहने दी जाती है, फिर गट्ठों को लकड़ी के फट्ठों पर फटकारा जाता है या बैलों के पैरों के नीचे रौंदा जाता है। इस प्रकार गहाई करके चावल के दाने और भूसी अलग कर ली जाती है। इस काम के लिए आजकल बिजली के उपकरणों का प्रयोग होने लगा है। भूसीयुक्त धान को अच्छी तरह सुखाकर पटसन के बोरों में या सुथरी खत्तियों में या कमरों में भर देते हैं। पड़े-पड़े धान की कोटि उत्तम और खुशबूदार हो जाती है। इस तरह प्राप्त चावल स्वादिष्ट होता है। बुआई के लिए भी धान हवाबन्द कमरों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धान की पौध हल-चले खेतों में कतारों में रोपी जाती है

में रखना चाहिये और दो महीने की अवधि के बाद उन्हें धूप में सुखाते रहना चाहिये।

चावल का इतिहास

संसार में उगाये जाने वाले खाद्यान्नों में शायद धान सबसे प्राचीन है। धान भारत ही नहीं, समस्त एशिया की एक प्रमुख खाद्य फसल (food crop) है। भारत में धान की खेती प्राचीनकाल से की जा रही है। इस कथन की पुष्टि में अनेक पुरातत्त्वीन प्रमाण प्रस्तुत किये जाते हैं तथा बहुत से प्राचीन हिन्दू ग्रन्थों, धर्मशास्त्रों और पुरातन काल के संस्कृत साहित्य में इसका उल्लेख मिलता है। विविध ऐतिहासिक स्थानों की खुदाइयों से प्राप्त पुरातत्त्व सामग्री से भी प्रमाणित होता है कि धान का मूलस्थान भारत है, और चीन में भी चावल भारत से ही पहुंचा था। हस्तिनापुर (उत्तर प्रदेश) में की गयी खुदाई में प्राप्त अवशेषों में धान के जले दानों से स्पष्ट हो जाता है कि आज से लगभग २६५०-३००० वर्ष पूर्व चावल की पैदावार भारत में हुई। धान के ये नमूने संसार-भर में सबसे पुराने माने गये हैं।

ऋग्वेद भारतीय संस्कृति का प्राचीनतम ग्रन्थ समझा जाता है। धारणा है कि आज से लगभग ३४६६ वर्ष पूर्व इसकी रचना हुई थी। इसमें भी धान की खेती के सम्बन्ध में अनेक उद्धरण मिलते हैं। वैदिक संस्कृति के अन्तर्गत जन्म, विवाह, मृत्यु आदि अवसरों पर सदियों से धान के प्रयोग की पुरातन परम्परा चली आ रही है।

'शुश्रुतसंहिता' में धान की विभिन्न किस्मों का उल्लेख मिलता है। यह भारत का एक प्राचीन आयुर्वेदिक ग्रन्थ है। यहां तक कि यूनानियों को भी धान का पता सिकन्दर महान के भारत आक्रमण के बाद हुआ, और यूनानी (greek) लेखकों ने भी इस तथ्य को स्वीकारा है कि भारत ही धान का उत्पत्ति-स्थान है। यह भी सम्भव है कि जो अरबी सौदागर पश्चिमी-तट के मार्ग से भारत आते रहे वे सीधे द्रविड़ लोगों के सम्पर्क में आकर धान की फसल के बारे में जानकारी प्राप्त करके यूनान ले गये। विश्वास किया जाता है कि चीन में धान की खेती २८०० ईसा पूर्व के आसपास होने लगी थी। लेकिन ऊपर दिये गये अनेक प्रमाणों के आधार पर तथा आधुनिक इतिहासकारों और कृषि-विशेषज्ञों की खोज के अनुसार यह कहा जा सकता है कि धान का मूल स्थान भारत ही है।

धान-अनुसन्धान

धान को अंगरेजी में राइस (rice) कहते हैं और इसका वानस्पतिक नाम ओरिजा सतीवा एल (*oryza sativa L*) है। भारत में धान पर सर्वप्रथम वाट (Watt) ने १८९१ में अनुसन्धान कार्य आरम्भ किया था। तब से अब तक इसकी किस्मों, जातियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

species) तथा उत्पादन-वृद्धि के लिए पर्याप्त अनुसन्धान-कार्य हो चुका है। अनेक कृषि अनुसन्धान केन्द्र खोले जा चुके हैं। १९३८ में रामानुजम् तथा १९४० में पाठक ने देश के धान पर विशेष अनुसन्धान कार्य किये। इस तरह पिछले ५०-६० वर्षों में धान-अनुसन्धान के विभिन्न पहलुओं पर पर्याप्त कार्य किया जा चुका है।

इस समय भारत में धान की ६२८ से अधिक किस्में उगायी जाती हैं। इसके अतिरिक्त बहुत-सी नयी और उन्नत किस्मों का भी विकास किया गया है। इस दिशा में केन्द्रीय चावल अनुसन्धानशाला, कटक ने बहुत लाभदायक अनुसन्धान-कार्य किया है तथा राज्यों के कृषि विभागों ने भी धान की पैदावार की वृद्धि में भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद्, नयी दिल्ली के सहयोग से विशेष योगदान दिया है। धान की मुख्य किस्मों के नाम हैं—बासमती, असकटा, बंकुरा, कादो-५६, एच. आर. ८, अम्बेमोहर-१५७, जी ई बी २४, रामज्वाइन, पालमन सफेद-७२ और पतासा आदि। कुछ नयी, उन्नत किस्मों के नाम हैं—ताइयुंग नेटिव-१, ताइनान-३, ताइयुंग-६५ और ए डी टी-२७। ये उपयोगी किस्में खूब पैदावार देती हैं। इनमें ताइयुंग किस्म के परिक्षणों में पाया गया है कि एक एकड़ भूमि में ४,००० पौंड उपज प्राप्त हुई है, जबकि एक अच्छी देसी किस्म से ९०० पौंड प्रति एकड़ से अधिक उपज नहीं मिलती। ये उन्नत किस्में ताइवान से लायी गयी हैं।

भोजन के रूप में चावल

चावल भोजन के रूप में कई तरीकों से खाया जाता है। आम प्रचलित तरीका तो यह है कि चावल को उबालकर खाते हैं या घी, तेल में पकाकर। मटर, गोभी या मांस-मछली के साथ पकाकर इसका पुलाव बनाकर भी खाते हैं। उबले चावलों की मांड (starch) निकालकर और गरम चावलों में रसदार, मसालों वाली सब्जियां, मांस मिलाकर खाते हैं। चावलों का पुलाव पकाकर उसमें किस्म-किस्म के सुगन्धित मसाले तथा सूखे मेवे (काजू, बादाम, किशमिश आदि) भी मिलाकर खाते हैं। चीनी, शक्कर और घी में पकाकर मीठे चावल तो सभी का मन भाता भोजन है। इसे मीठा पुलाव कहते हैं। बड़ी-बड़ी दावतों में मीठे चावल और नमकीन पुलाव जिसमें घी, जीरा, मोटी इलाइची, दालचीनी आदि डालते हैं, विशेष भोजन के रूप में परोसे जाते हैं। दूध में डालकर चावलों की स्वादिष्ट खीर और फिरनी भी बनाते हैं। दाल-चावल मिलाकर बढ़िया खिचड़ी भी बनती है जो घी में छौंक ली जाती है। दक्षिण भारत में पुत्तु, दोसा, इडली, उपमा और आपम चावल के बने विशेष भोजन हैं। वैसे वहां उबालकर भी चावल खाते हैं।

चावल की घटिया किस्मों से विशेष मांड (starch) भी तैयार किया जाता है जो लांड्रियों में धुले कपड़ों को कड़ा करने के काम में आती है। धोबी भी इसका प्रयोग करते हैं। (परन्तु चावल की अधिक खपत के कारण आजकल मांड बहुत कम बनायी जाती है।) व्यापारिक रूप से चावल से मुरमुरे, चिउड़ा, और खील बनायी जाती है, जो बड़े स्वाद से खायी जाती है।

चावल में पोषक तत्त्व

पोषक खनिज तत्त्व भी इसमें पर्याप्त मात्रा में हैं। चावल में प्रोटीन की मात्रा आमतौर पर ५-६ प्रतिशत तक पायी गयी है। इसमें बी-ग्रुप के विटामिन पूरी मात्रा में पाये जाते हैं। हमें अपने दैनिक जीवन में जितनी कैलोरी (calories) और प्रोटीन की आवश्यकता है, सभी अनाजों की अपेक्षा उसका आधे से अधिक भाग चावल से प्राप्त हो सकता है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नेत्र की नियन्त्रण-विधि

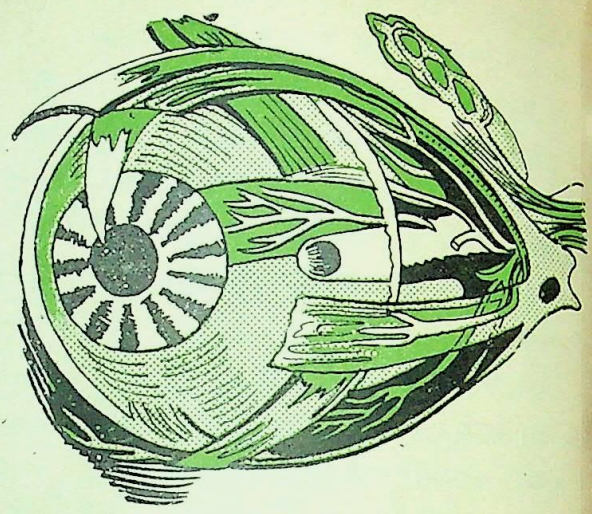

मौजमसिंह राजपूत, एम. एस-सी.

जब कोई जीव-विज्ञानवेत्ता शरीर के किसी अंग की कार्य-विधि को समझाने की कोशिश करता है, तो वह उसे कई भागों में बांट लेता है और उसके विभिन्न भागों के अन्त:सम्बन्धों को ज्ञात करता है। किन्तु इस प्रकार का अध्ययन कुछ अंगों के लिए लाभदायक नहीं है। ये अंग बाह्य निरीक्षण से अच्छी तरह देखे जा सकते हैं और इनकी कार्य-विधि समझी जा सकती है। अध्ययन-कर्ता किसी साधारण उत्तेजना के लिए इसकी प्रतिक्रिया देखता है, और उस उत्तेजना और प्रतिक्रिया के बीच सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा करता है। इस अध्ययन से अंग विशेष की मौलिकता का भी पता चल सकता है, और इसी अध्ययन से जीव-विज्ञानवेत्ता सम्बन्धित अंग की कार्य-विधि का अनुमान लगाते हैं।

निम्नांकित पंक्तियों में यह समझाने का प्रयत्न किया गया है कि बाह्य उत्तेजना से मानव दृष्टि-नियन्त्रण-विधि का किस प्रकार अध्ययन किया जा सकता है। मुख्य रूप से उस विधि को समझाने की चेष्टा की गयी है जिसमें नेत्र वस्तुओं को अपनी दृष्टि-सीमा के भीतर देखता है तथा उन्हें अनुभव करता है। इस सन्दर्भ में हम नेत्र को एक कैमरा नहीं समझेंगे, वरन एक यान्त्रिक संस्थान, एक सर्वोसंस्थान के रूप में इसका अध्ययन करेंगे। यह ज्ञातव्य है कि इंजीनियर सर्वो संस्थान उस नियन्त्रण-विधि को कहते हैं जो एक बदलती हुई भौतिक वस्तु को विशेष प्रकार से नियन्त्रित करती है। उस भौतिक वस्तु के वास्तविक मान की किसी विशिष्ट मान से तुलना करते हैं। इसमें दोनों मानों का अन्तर एक कार्य परिणितक (actuator) को चालित करता है जो बाद में उस बदलती हुई वस्तु को उस तुलनाकारक के साथ बदलती है। तुलनाकारक वस्तु उस यन्त्र का प्रेषक होता है तथा जो वस्तु नियन्त्रित की जाती है वह परिणाम होती है। सर्वोक्रिया का मुख्य सिद्धान्त फीडबैक (Feedback) सिद्धांत है, जो पृ. ४० के चित्र में निर्देशित है।

मानव शरीर : अनेक सर्वोक्रियाओं का योग

सर्वोक्रिया अपनी कार्य विधि को स्वयं नियन्त्रित करती है और प्रेषक में परिवर्तन के लिए या परिणाम में बाह्य परिवर्तन के लिए सुधार करती है। मोटरों का शक्ति-नियन्त्रक पहिया (steering wheel) सर्वोसंस्थान का एक उचित उदाहरण है। प्रेषक संकेत नियन्त्रक पहिये से मिलता है तथा परिणाम सम्मुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहियों की स्थिति से मिलता है। जब प्रेषक संकेत तथा परिणाम भिन्न होते हैं, तो उनका अन्तरजलीय प्रभाव सम्मुख पहियों को घुमाता है। जब ड्राइवर शक्ति नियन्त्रक पहिये को घुमाता है तो पहिये एक नवीन स्थिति ले लेते हैं। जब कोई गड़बड़ी पहियों को मोड़ देती है, तो सर्वोक्रिया द्वारा वे अपनी स्थिति पर आ जाते हैं।

मानव शरीर भी अनेक सर्वोसंस्थानों का योग है। फीडबैक नियन्त्रण संस्थान शरीर का तापमान नियन्त्रित रखते हैं। वे शरीर के विभिन्न अंगों में रक्त के संचार वेग को बदलते हैं, तथा सांस लेने की क्रिया एक निश्चित सीमा में रखते हैं। अस्थि-जोड़ एक विशेष गुण रखते हैं जो अंगों के मोड़ को नापते हैं और संवेदना को मस्तिष्क की आज्ञा के अनुसार पीछे से संवेदित करते हैं। संवेदना को पीछे से पहुंचाने वाला संस्थान शरीर के बाहर भी पूरा हो जाता है। उदाहरण के तौर पर एक आदमी जो एक वस्तु को उठाना चाहता है, अपनी आंख से वस्तु और हाथ के बीच के अन्तर को देखता है। दृष्टि ज्ञान उन दोनों स्थितियों के बीच के अन्तर को नापता है। अन्तर का आभास होते ही मस्तिष्क-आज्ञा से हाथ उस अन्तर को समाप्त करके वस्तु को उठा लेता है।

एक कठिनाई

किन्तु ये सभी जीवन-संस्थान इतने अधिक विस्तृत रूप से अध्ययन नहीं किये जा सकते हैं। संस्थानों के विश्लेषण के लिए एक प्रेषक बिन्दु होना चाहिये, जहां पर कोई संवेदना दी जा सके तथा एक परिणाम-द्योतक बिन्दु भी होना चाहिये जहां से परिणाम की संवेदनाएं नापी जा सकें। साथ ही यदि इस संस्थान में कई स्थिर फीडबैक जाल हों, तो उस अंग की गतिविधियों को सूक्ष्मतापूर्वक नियन्त्रित किया जा सकता है। इस प्रकार के संस्थानोंमें उलटे तथा सीधे फीडबैक से संस्थान के विश्लेषण में सफलता प्राप्त की जा सकती है। इन्हीं सीमाओं ने संस्थान-विश्लेषण के उपयोग को कुछ निश्चित अंगों के अध्ययन के लिए ही सीमित कर दिया है। उन संस्थानों में जहां संवेदना-सूत्र से गतिज क्रिया की जा सकती है, वहीं इसका उपयोग किया जा सकता है। अनेक वैज्ञानिकों ने फीडबैक जाल-पद्धति से, भुजाओं की नियन्त्रण शक्ति, आंख द्वारा मानसिक गतियों का नियन्त्रण तथा विशेषतया आंख द्वारा आंख ही की गतियों के नियन्त्रण का अध्ययन किया है।

आंख के प्रकाशीय अंग बाह्य वस्तु का बिम्ब रेटिना पर बनाते हैं। प्रकाश-शक्ति नेत्र के एक संज्ञाशील परदे पर पड़ती है, जहां पर वह वात नाड़ी की अन्तर्प्रेरणा में परिवर्तित हो जाती है। रेटिना पर के ग्राहक तन्तु समान रूप से वितरित नहीं होते हैं। शंकुकार तन्तु जो विशेषत: दिन के प्रकाश तथा वर्ण दृष्टि के लिए होते हैं, संख्या में अनेक होते हैं, तथा फोबिया में घने भरे रहते हैं। फोबिया रेटिना में एक गट्ठे की शक्ल में होता है। यह रेटिना का वह अंग है जिसकी दृष्टि सबसे तेज होती है। अंगूठे के नाखून का एक फुट की दूरी से बना बिम्ब उसे पूरी तरह ढंक लेता है। किसी वस्तु को पास से देखने के लिए मनुष्य अपनी आंख को घुमाता है, ताकि वहां उस वस्तु का बिम्ब दोनों आंखों के फोबिया के क्षेत्र में ही बने।

सर्वोक्रिया से तुलना

मांसपेशियों के तीन जोड़े आंख को अक्षिकूप में घुमाते हैं। सर्वोक्रिया के परिणामस्वरूप ही मांसपेशियां इस प्रकार का नियन्त्रण करती हैं कि वस्तु का बिम्ब फोबिया पर ही बनता है। बिम्ब के एक विशेष भाग के अनुसार प्रत्येक मांसपेशी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का जोड़ा फोबिया से संवेदनाएं प्राप्त करता है। मांसपेशियां तब नेत्र गेंद को इस प्रकार घुमाती हैं कि यह अन्तर बिलकुल समाप्त हो जाता है। रेटिना पर बिम्ब के विस्थापन की नेत्र-क्रिया एक फीडबैक का कार्य करती है।

फीडबैक नियन्त्रण संस्थान ही सब कुछ है जो वस्तु की गहराई का अनुमान कराता है। उदाहरण के लिए, वस्तुओं के बिम्ब दोनों ओर रेटिना के समवर्ती भागों में बनते हैं। आंख को केन्द्रीभूत करने के कोण पर ठीक साधने के लिए एक संस्थान होता है। यह संस्थान दृष्टि नियन्त्रण के संस्थान से बिलकुल भिन्न है, किन्तु यह भी उन्हीं मांसपेशियों द्वारा नियन्त्रित होता है। यह आवश्यक है कि बिम्ब बिलकुल रेटिना पर ही केन्द्रीभूत हो। चूंकि लेंस तथा रेटिना के बीच की दूरी निश्चित है, इसलिए किरणों को रेटिना पर केन्द्रित करने के लिए लेंस की मोटाई बदली जाती है और उसका नाभ्यान्तर भी। यहां पर भी एक फीडबैक नियन्त्रण संस्थान है जो लेंस की सुविधाजनक स्थिति को सन्तुलित रखता है।

एक विशेष बात

केन्द्रीभूत करने तथा सुविधाजनक स्थिति को सन्तुलित करने के संस्थानों में एक विलक्षण सम्बन्ध है। शायद कोई यह सोच सकता है कि केन्द्रीभूत करने का कोण ही दृष्टि संस्थान को वस्तु की दूरी समझने की सूचनाएं देता है और बाद में लेंस के नाभ्यान्तर को निश्चित करता है। नेत्र की साधक क्रिया लगातार होती है जिससे लेंस का नाभ्यान्तर कम तथा अधिक होता है। दृष्टिगोचर वस्तु की स्थिति के अनुसार इस दिशा में इस प्रकार के परिवर्तन वस्तु के बिम्ब को केन्द्रीभूत करने में सहायक होते हैं, तथा दूसरी दिशा में परिवर्तन बिम्ब की स्थिति को खराब कर देते हैं। इस प्रकार की सूचना नियन्त्रक संस्थान को पुनः प्रेषित की जाती है। कई बार इस प्रकार की क्रिया के बाद जब लेंस की ठीक मोटाई प्राप्त हो जाती है, तब इसके बारे में सूचनाएं केन्द्रीभूत कारक संस्थान को दे दी जाती हैं। दोनों संस्थान बिलकुल भिन्न होते हैं। वास्तव में अपने नियन्त्रण कार्य में भी भिन्न होते हैं। किन्तु दोनों ही एक दूसरे से मिले होते हैं तथा एक संस्थान द्वारा प्राप्त

सर्वोसंस्थान का सिद्धान्त

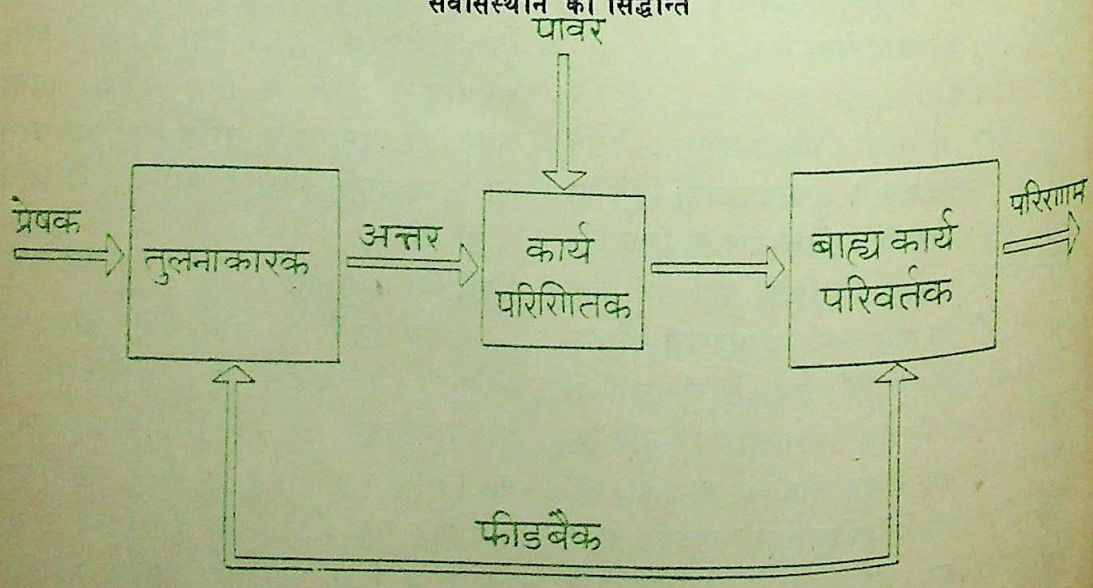

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

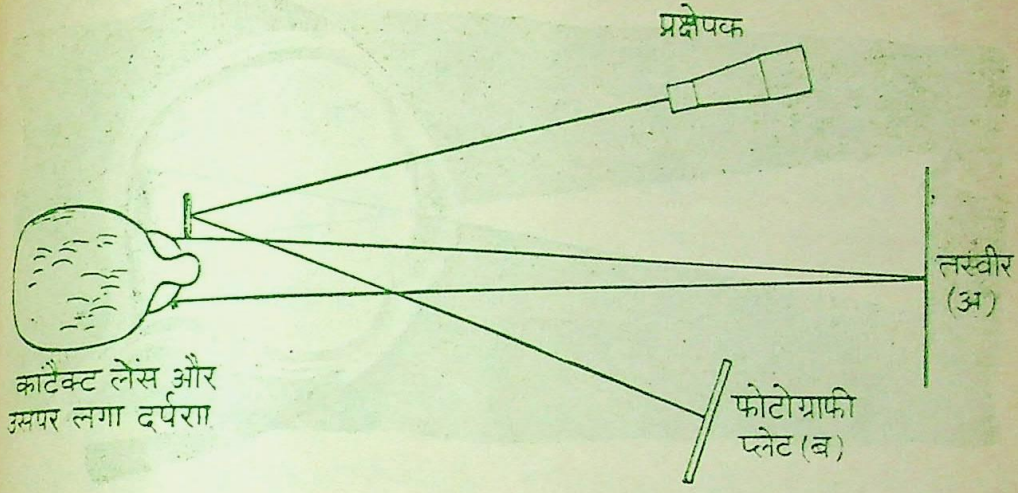

सूचनाएं दूसरे को दे दी जाती हैं।

एक और फीडबैक क्रिया आंख के तारे (pupil) के व्यास को बदलती है। यह रेटिना की औसतन चमक को नापती है तथा आयरिस (iris) की मांसपेशियां रेटिना को क्रियाशील करती हैं। बिम्ब की चमक के घटने-बढ़ने को कम करने के लिए यही क्रिया फिर साधक संस्थान से जुड़ती है, क्योंकि जब लेंस का नाभ्यान्तर बढ़ता है, तब बिम्ब की चमक को स्थिर रखने के लिए तारा आकार में बढ़ता है। अन्त में एक सम नियन्त्रक परिपथ है जो नेत्र की पलकों को बाहर की ओर घुमाता है जिससे दृष्टि ऊपर को उठायी जाती है। इस अवस्था में दृष्टि-परिपथ आपस में जुड़े अनेक फीडबैक संस्थानों का बना होता है। प्रत्येक संस्थान अलग-अलग वस्तुओं को अलग-अलग देखते हैं।

आंख चित्र के ऊपर घूमती है तथा निश्चित स्थानों पर पड़ती है। दर्पण दृष्टि की दिशा के अनुसार घूमता है। इस प्रकार उन्हीं निश्चित स्थानों के चित्र फोटोग्राफी की प्लेट पर बनते हैं। इस भांति बने धब्बों से विभिन्न क्षेत्रों में दृष्टि-ध्यान का अनुमान लगाया जाता है—(अ) तस्वीर, (ब) फोटोग्राफी की प्लेट

नवीन प्रयोग

आंख की बिम्ब स्थापना और ताकने की क्रिया को विस्तारपूर्वक समझने के लिए वैज्ञानिकों ने अनेक यन्त्र तथा विधियां निकाली हैं। आंख की कार्य-प्रणाली को समझने के लिए डेलावेयर ने अपनी आंख पर एक प्लास्टिक का बहुत हलका लीवर लटकाया और उसकी गति से आंख की गति का अध्ययन किया। किन्तु अब कुछ सामान्य विधियां भी ज्ञात हो गयी हैं जिनमें सिर्फ नेत्र के तल पर से टकराकर लौटने वाले प्रकाश के फोटोग्राफ लेने से आंख की गति का अध्ययन किया जा सकता है। एक दूसरी विधि के अन्तर्गत नेत्र गोलक का आवेश नापा जाता है। चूंकि नेत्र गोलक में कुछ आवेश होता है, अतः इसकी धीमी गति को एक विद्युत उग्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

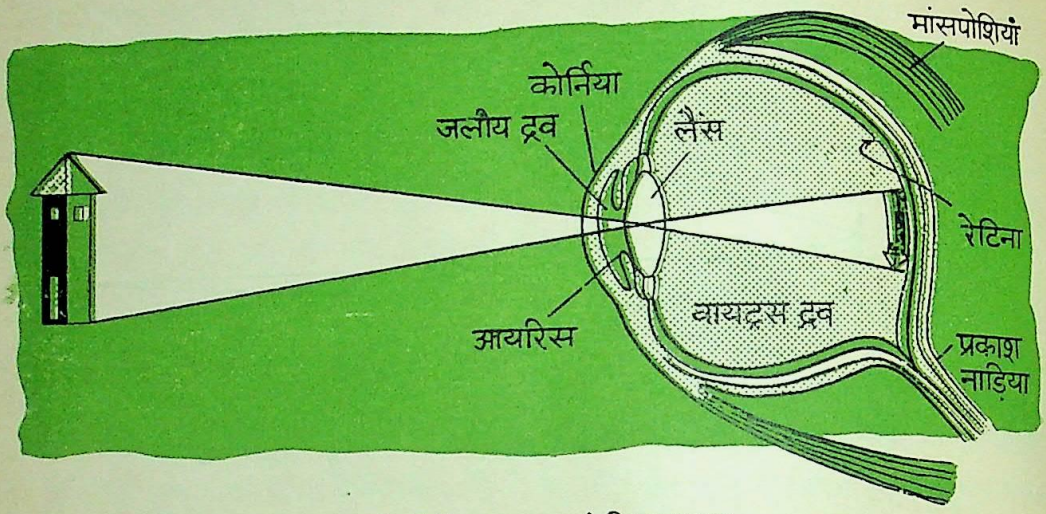

नेत्र के विभिन्न भाग एवं बिम्ब-रचना

(electrode) से नापा जा सकता है। इसे नेत्र कूप के आस-पास रखते हैं। किन्तु कम परेशानी की विधियों में आंख के ऊपर दर्पण लगाया जाता है, जिसके नीचे रबर का एक चूषक प्याला लगा रहता है जिससे दर्पण द्वारा परावर्तित प्रकाश नेत्र गोलक के हिलने-डुलने पर नेत्र के प्रकाश-अंग कीअवस्था बता सके। आधुनिक प्रयोगों में यह दर्पण नेत्र-लेंस से चिपटाकर लगाये गये चश्मे (contact lens) पर लगाया जाता है। इस पर रबर के चूषक प्याले की आवश्यकता नहीं रहती। इस प्रकार के दर्पण पर एक प्रक्षेपक होता है। फोटोग्राफी से यह पता चल जाता है कि आंख किस प्रकार वस्तु को देखती है। आंख चित्र के ऊपर घूमती है, तथा वह निश्चित स्थानों पर पड़ती है। दर्पण दृष्टि की दिशा के अनुसार घूमता है। इस प्रकार उन्हीं निश्चित स्थानों के चित्र फोटोग्राफी की प्लेट पर बनते हैं। इस प्रकार बने धब्बों से विभिन्न क्षेत्रों में दृष्टि-ध्यान का अनुमान लगाया जाता है।

यद्यपि इस प्रकार के प्रयोग अब भी अपूर्ण अवस्था में हैं, किन्तु इन प्रयोगों से मिली सूचनाओं से यह सिद्ध हो रहा है कि नेत्र के सम्बन्ध में जो पुरानी धारणा है (कैमरे से आंख की समता है) नितान्त सही नहीं है। नेत्र-नियन्त्रक संस्थान बिम्ब रचना में काफी महत्त्व रखते हैं। शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में की गयी प्रगति के आधार पर यह तथ्य अब विवाद से दूर होता जा रहा है।

लेसर द्वारा भूकम्प की भविष्यवाणी

अमरीका में भूकम्प-सम्बन्धी पूर्व सूचना पाने की एक नयी प्रणाली की जांच लेसर की मदद से की जा रही है। यह एक ऐसा उपकरण होता है जिससे पेंसिल के बराबर पतली एक शक्तिशाली किरणावलि फेंकी जाती है। यह किरणावलि काफी दूर तक जाकर भी उतनी ही पतली बनी रहती है और उसकी रोशनी सामान्य प्रकाश की भांति बिखरती नहीं।

भूकम्प की पूर्व सूचना देने वाले यन्त्र के रूप में लेसर अपनी किरणावलि को मीलों दूर पर लगे रिफ्लेक्टर पर भेजता है। दूसरे अति संवेदनशील यन्त्र उस लौटती किरणावलि के कक्ष अध्ययन में भू-प्रदेश के हलके से हलके कम्पन को भी अंकित कर लेते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक महान सम्भावना की स्थापना

क्या लुई पाश्चर निर्मूल धारणाओं का शिकार था?

डा. हर्ष प्रियदर्शी

लुई के शत्रुओं को व्यक्तिगत दुःख महज उसकी ख्याति के कारण नहीं था; इसके और भी कारण थे। इनमें प्रमुख कारण था लुई की चुनौती देने की प्रवृत्ति। लुई अपने लेखों और व्याख्यानों के माध्यम से दूसरों की प्रतिभा और व्यक्तित्व की खुली आलोचना करता था। यही कारण था कि उसके मित्र कम थे और शत्रु अधिक। वास्तविक बात यह थी कि लुई को शब्द-युद्ध से प्यार था। वह हर किसी से, किसी भी विषय पर शब्द-युद्ध करने के लिए तत्पर रहता था।

सड़े हुए मक्खन की दुर्गन्ध

अनेक लोगों ने लुई की इस प्रवृत्ति का विरोध किया; कुछ समकालीन वैज्ञानिकों ने सैद्धान्तिक रूप से भी उसका विरोध किया। हालांकि लुई के प्रयोग अद्भुत थे, पर उनमें एक अधूरापन भी था। जब कभी लुई ने अपने दण्डाकार प्राणी-कणों की सहायता से किण्वन द्वारा दही के अम्ल का सृजन करने की चेष्टा की थी, उसे अपनी बोतलों में सड़े हुए मक्खन की दुर्गन्ध प्राप्त हुई थी। सड़े हुए मक्खन की इस दुर्गन्ध ने उसे निराशा की गहराइयों में डुबा दिया था। इसी दुर्गन्ध के कारण उसे अपने उन प्रयोग-पात्रों में जिनमें वह दण्डाकार प्राणी कणों तथा दही के अम्ल की बूंदों की अपेक्षा करता था, कुछ नहीं प्राप्त होता था। लेकिन लुई निराशा से कुण्ठित नहीं हुआ। वह परेशानी में डूबा रहकर भी समस्या की दीवार से अपना सिर तोड़ लेना नहीं जानता था। वह गम्भीरता से समस्या का अध्ययन करता था। वह हमेशा नयी खोज में लगे रहने का आदी था।

लुई के मस्तिष्क में हमेशा यह नया प्रश्न कौंधता रहा कि प्रयोग-पात्रों में कभी-कभी दही के अम्ल की बूंदों की जगह दुर्गन्धमय मक्खन के अम्ल की बूंदें कहां से आ जाती हैं?

एक दिन उसने अपने प्रयोग-पात्र में एक नये, सूक्ष्म प्राणी को देखा। इस नये प्राणी को देखते ही वह सहसा चीख पड़ा: 'ये नये प्राणी कौन हैं? ये तो मेरे दण्डाकार यीष्ट कणों की अपेक्षा आकार में बहुत बड़े हैं। ये नये प्राणी वास्तव में बहुत बड़े हैं। निश्चय ही ये दूसरे प्रकार के जीवाणु हैं।

नये प्राणी कहां से आ गये?

लुई इन अद्भुत प्राणियों को देखता रहा। आतुर दृष्टि से वह उनका सर्वेक्षण करता रहा और मन ही मन सोचता रहा कि मेरे इन प्रयोग-पात्रों में ये नये प्राणी कहां से आ गये? वह इन नये जीवाणुओं को दण्डाकार प्राणियों से विलग करने के अनेक उपाय सोचता रहा। लेकिन जब-जब वह महसूस करता कि दण्डाकार प्राणी कणों वाले प्रयोग पात्रों से उसने इन्हें विलग कर लिया है तो पुनः उन्हीं प्रयोग-पात्रों में उन्हें वह देख लेता।

एक दिन सहसा उसके मन में यह विचार आया कि जिन प्रयोग पात्रों में ये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नूतन जीवाणु उपलब्ध हो जाते हैं, उन्हीं में से सड़े हुए मक्खन की दुर्गन्ध आने लगती है।

लुई ने जीवाणु-जीवन का एक नया परिणाम घोषित किया

अपने इस नये विचार के साथ-साथ उसने जीवाणु-जीवन का एक नया परिणाम घोषित किया कि ये नये जीवाणु एक अन्य प्रकार के खमीर हैं जो चीनी से दुर्गन्धयुक्त मक्खन के अम्ल का सृजन करते हैं। किन्तु इतने पर भी लुई निश्चिन्त नहीं हो पाया था, इसलिए वह अपने प्रयोगों को बार-बार दोहराता रहा। प्रयोगों को दुहराने की इस प्रक्रिया में लुई ने जीवाणु जीवन-सम्बन्धी एक महत्त्वपूर्ण तथ्य का पता लगाया कि वायु इन प्राणियों को मार देती है। अपनी इस उपलब्धि को उसने अकादमी को बताया। उसने यह घोषित किया : 'मैंने एक नये प्रकार के जीवाणुओं का आविष्कार किया है जो वायु के बिना जीवित रहते हैं। बिना वायु के जीवित रहने वाले जीवाणुओं का यह प्रथम उदाहरण है।'

वस्तुतः स्थिति यह नहीं थी। कीटाणु विज्ञान के इतिहास में लुई वह प्रथम व्यक्ति नहीं था जिसने बिना वायु के जीवित रहने वाले जीवाणुओं का पता लगाया था। जीवाणु-विज्ञान के इतिहास में लुई से सैकड़ों वर्ष पूर्व इस प्रकार के जीवाणुओं का पता लिवानहुक और स्पैलेंजनी को लग चुका था। इस घटना के सौ वर्ष पूर्व ही एक दिन इटली के इतिहास में स्पैलेंजनी भी इसी प्रकार बिना वायु के जीवित रहने वाले जीवाणुओं को देखकर चौंक पड़ा था। किन्तु सम्भवतः लुई को अपने इन पूर्वजों का जान नहीं था, नहीं तो वह इस प्रकार की घोषणा कभी नहीं करता। तथ्य जो कुछ भी हों, यह तो सत्य है ही कि लुई की इस घोषणा का तात्कालिक विज्ञान की दुनिया पर गहरा प्रभाव पड़ा। लुई ने एक बार पुनः सारी दुनिया को इस महान तथ्य से अवगत करा दिया कि जीवाणु मानवता के अत्यन्त भयंकर शत्रु हैं। महज इतना ही नहीं, अपनी इस घोषणा के प्रमाण में लुई ने लोगों को यह बताया कि जीवाणु ही गोश्त या अन्य पदार्थों को उठाकर वस्तुओं में परिवर्तित करते हैं। इस सन्दर्भ में यह उल्लेखनीय है कि जीवाणु-जीवन के इस विनाशकारी तथ्य का सर्वप्रथम आविष्कार वैज्ञानिक स्वान ने लुई से काफी पूर्व कर लिया था।

लुई एक अजीब व्यक्तित्व था। वह क्या था? कौन था? इतिहास के पृष्ठों पर रहस्यमयता छायी हुई है

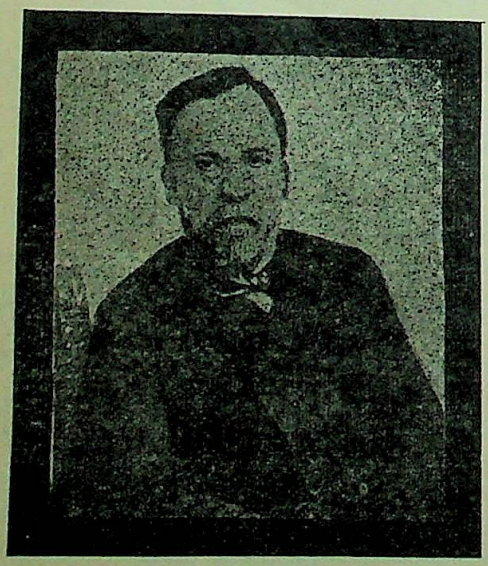

महान तथ्य की घोषणा

अपनी इस उपलब्धि के साथ-साथ लुई ने अकादमी में अपने इस महान तथ्य की घोषणा लैवोजियर महान के एक वाक्य के साथ की। वह वाक्य था : 'जनहित और जन कल्याण के लिए जो कार्य किया जाता है, वह त्याग और पीड़ा से पूर्ण होता है। इन जन-कल्याणकारी कार्यों की दूरदर्शिता केवल उन महान प्रतिभाशाली व्यक्तियों में होती है जो हर बाधा को जीत लेते हैं।' इन्हीं वाक्यों के साथ उस दिन पेरिस की वैज्ञानिक अकादमी में लुई ने एक महान सम्भावना की स्थापना की।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

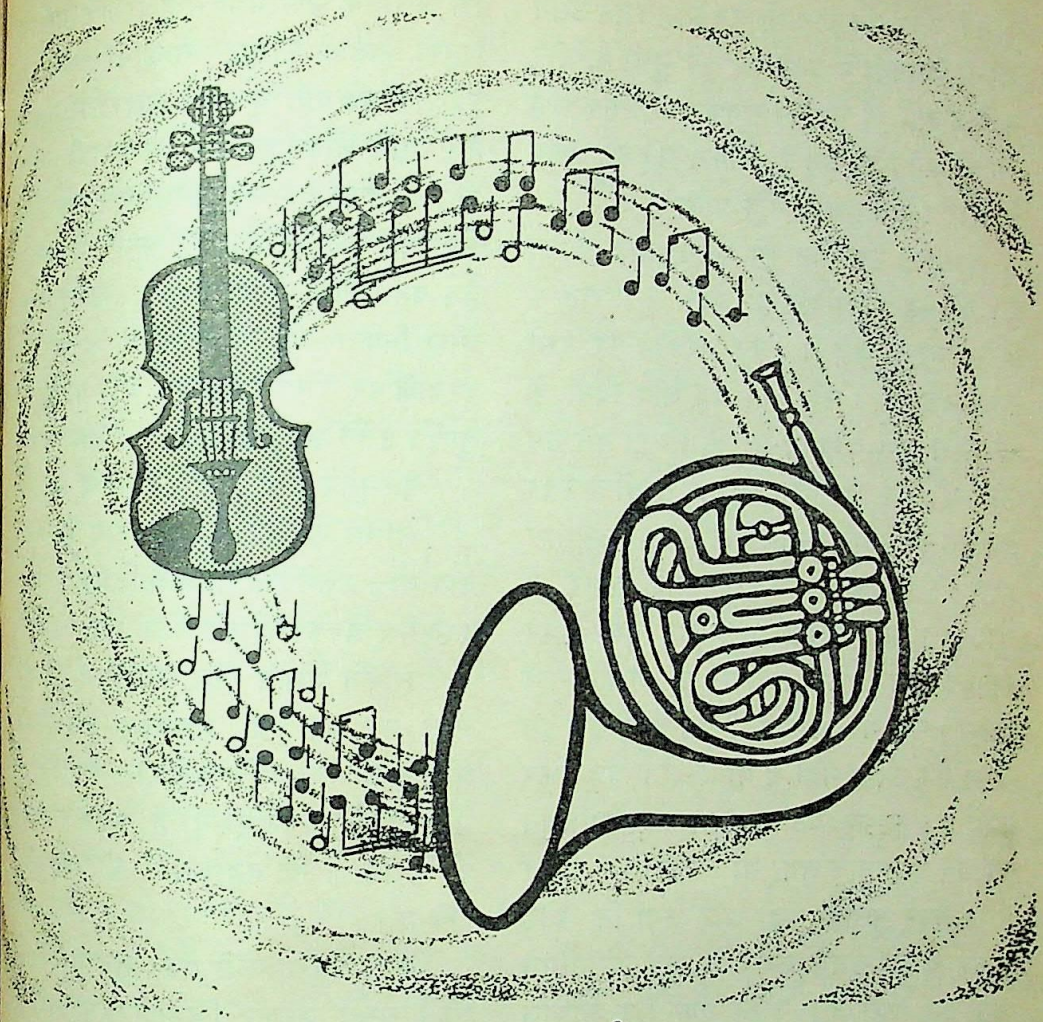

प्राणों का मोह

रामनाथ थडानी

भार्गव ने पीछे की खिड़की खोल दी। आज फिर वही संगीत। कौन हो सकता है? वायलिन और ट्रामबोन की मिलीजुली स्वर-लहरी। वह रोज की तरह विमोहित हो गया। उसने चाहा कि वह खिड़की से हट आये; पलंग पर आकर लेट जाय, लेकिन उसके पैर जैसे रुक-से गये थे। उसने पास ही पड़ी कुर्सी सरका ली और उस पर बैठ गया। यह क्या हो जाता है? वह नहीं जानता कि इन दो साजों को बजाने वाले कौन-सा राग बजाते हैं, फिर भी इस संगीत में एक कशिश है जो उसे अपनी ओर खींच लेती है। तमाम दिन का थका हुआ वह दफ्तर से रात में घर लौटता है, और इस स्वर-लहरी को सुनकर अपनी थकान भुला बैठता है। वह नहीं जानता, संगीत कब तक उसके कानों में इसी तरह पड़ता रहता है और उसकी पलकें अपने-आप बन्द हो जाती हैं।

खिड़की जिधर खुलती है, उधर बहुत बड़ा अहाता है जो रात के अंधेरे में डूबा रहता है। अहाते के उधर, यानी जो सामने चार-पांच मकान हैं, वहीं कहीं इन साजों पर लोग अजीब किस्म की धुन बजाते हैं। भार्गव ने कई बार चाहा कि उधर जाय और यह मालूम करने की कोशिश करे कि वे लोग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कौन हैं और यह कौन-सी धुन बजाते हैं। उसने अपनी जिन्दगी में बहुत-सी धुनें सुनी हैं, और कहीं बजती हुई धुन को सुनकर बता सकता है कि यह कौन-सी धुन है, लेकिन यह धुन अजब है, और इसे वह जान नहीं पाता।

भार्गव उस दिन की घटना याद करता है, तो वह रोमांचित हो जाता है। रात के करीब बारह बजे थे। वह खिड़की पर इसी तरह बैठा था। उस दिन वह और दिनों के मुकाबले कुछ परेशान-सा था। यही धुन उस रोज भी बज रही थी। वह खुद साजों के स्वर के साथ गुनगुनाने लगा। तभी उसे यह अहसास हुआ कि पायल की झंकार उसके कमरे में गूंजी है। वह परेशान-सा होकर इधर-उधर टहलने लगा। फिर भी कमरे में उसे कोई नहीं दिखा। क्या यह भ्रम था ? वह आज तक इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाया है। वह फिर कुर्सी पर आकर बैठ गया था और उसी धुन को खुद गुनगुनाने लगा था। उसे फिर पायल की झंकार सुनायी पड़ी और लगा कि कोई नाचने वाली उसके कमरे में ही है जो सामने नहीं आ रही है। उसने एक बार आवाज लगायी, 'कौन ?' पर कोई उत्तर नहीं मिला।

वह फिर कुर्सी पर आकर बैठ गया। उसके दिमाग में सिर्फ यही बात थी कि यह उसका वहम था, और अपने मन को कड़ा करके इस वहम से वह छुटकारा पा सकता है। उसने सभी भयानक विचार अपने मस्तिष्क से निकाल दिये और फिर उसी धुन में डूब गया।

लेकिन वह डर गया जब सामने दीवार की आलमारी अपने-आप खुल गयी। वह नहीं समझ पा रहा था कि यह क्या हो रहा है। वह उठकर आलमारी के निकट गया पर वहां कोई नहीं था। वह कमरे में चहलकदमी करने लगा। उसे स्पष्टतः भय लग रहा था।

वह आलमारी के पास खड़ा था और खिड़की से आती स्वर-लहरी सुन ही रहा था कि अचानक उसे महसूस हुआ कि यह स्वर-लहरी खिड़की के बाहर से आनी बन्द हो गयी है, और अब वही धुन आलमारी में बज रही है। उसने कांपते हाथों से आलमारी बन्द कर दी। पर फिर वह सहम गया जब उसने पाया कि उसी धुन की गूंज पूरे कमरे में भर गयी है। वह पागल-सा होने लगा। उसके मुंह से चीख निकल गयी, 'बचाओ।' उसने बाहर दरवाजे पर लोगों की दस्तक और फुसफुसाहटें सुनी। उसने उठकर दरवाजा खोल दिया।

ढेर-सारे लोग वहां इकट्ठे थे।

लेकिन उस रात भार्गव सब कुछ छिपा गया था। उसने बहाना बना दिया था कि वह दरअसल चक्कर खाकर गिर गया था।

लेकिन भार्गव फिर सावधान हो गया। आज वह डर नहीं सकता। उसे अभी से आभास हो रहा है कि उस रात-जैसी ही आज भी कोई घटना घट सकती है, पर उसे इस बात का भरोसा है कि वह अपने को बहकने से रोकेगा।

स्वर-लहरी उसी तरह सुनायी पड़ रही थी। उसने उठकर खिड़की बन्द कर दी। लेकिन यह क्या ? वही स्वर-लहरी जैसे कमरे में कैद होकर रह गयी है। बिलकुल वही पिच और बिलकुल वही लय और स्वरों की बिलकुल वही गहरायी। वह समझ नहीं पा रहा है। ऐसा आखिर क्यों है ? क्या वह उस रात की तरह ही पागल हो गया है। लेकिन नहीं, वह आज काफी सख्त है और किसी भी स्थिति को झेल सकता है। वह आज उस रात की तरह बहक नहीं सकता। किसी भी तरह नहीं। ऐसा नहीं हो सकेगा। नहीं, बिलकुल नहीं।

पर वह क्यों तो चीखना चाहता है। पता नहीं क्यों ? क्या वह पागल हो जायेगा ? उसका गला सूख रहा है। यह कैसा परिवर्तन ? वह क्या आज की रात मर जायेगा ? उसने सोचा कि उसे सख्ती से काम लेना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह अभी चीख-चीखकर लोगों को जगा देगा। वह लोगों को पुकारेगा और उनसे कहेगा कि यह क्या हो रहा है ? निश्चय ही कोई ऐसी साजिश इस इलाके में हो रही है जिसके अन्तर्गत उसे मार डालने की योजना बनी है, और वह यदि सावधान नहीं रहा, तो मार डाला जायेगा। पर वह आज रात सावधान रहेगा।

लेकिन दरवाजे पर का परदा क्यों हिल रहा है ? क्या परदे के पीछे कोई छिपा है ? कौन हो सकता है ? यहां इस समय कौन ? वह आवाज देता है, "कौन ? सामने आओ, नहीं तो गोली मार दूंगा।" लेकिन वह अपनी ही मूर्खता पर हंसता है, क्योंकि उसके पास पिस्तौल नहीं है और निरर्थक ही उसने उस सम्भावित व्यक्ति को गोली मार देने की धमकी दी।

और अब भार्गव फर्श पर बैठ गया था। लेकिन उसकी टांगें अकड़ने लगी थीं। वही संगीत-लहरी, फिर वही समां। वही सब कुछ, लेकिन आज की रात क्या हो सकता है ? भार्गव सोचने लगा। उसे भय है, कहीं उसकी मृत्यु न हो जाय। लेकिन ऐसा वह नहीं होने देगा। पर उसके पैर क्यों तो सुन्न पड़ते जा रहे हैं।

लेकिन भार्गव बहुत-सी बातें सोच गया। क्या यह उसका आखिरी समय आ गया है ? यदि ऐसा हुआ तो यह बहुत बुरी बात होगी पर वह इस सबके अतिरिक्त और कुछ सोचता है। यदि यही आखिरी समय है, तो उसने अपनी जिन्दगी में क्या किया ? क्या किया उसने ? और इस तरह की निर्जनता में उसके जीवन का अन्त हो जायेगा ! पर वह खामोश रह जाना ही बेहतर समझता है। उसके दोनों पैर सुन्न हो गये हैं और वह अपनी चेतना को खोता जा रहा है। लेकिन वह अपनी चेतना को खोने नहीं देगा, क्योंकि मरने से पहले वह और बहुत-सी बातें सोच लेना चाहता है। वह यह सोच लेना चाहता है कि वायलिन और ट्रेम्बोन की इस स्वर-लहरी में कौन-सा जादू है जो उसे अपनी ओर खींच ले रहा है और उस जादू के प्रभाव से वह अपने को भूलता जा रहा है। वह क्या इस रहस्य को जानने से पहले ही मर जायेगा ? क्या ऐसा ही होगा।

अब उसकी बाहें सुन्न पड़ती जा रही हैं। उसकी चेतना आधी से अधिक लुप्त हो चुकी है, और शायद उसकी जिन्दगी का दीपक जल्द ही बुझ जायगा। पर यह कैसे हो सकता है ? वह यह सोच लेना चाहता है कि वह क्या है ? दुनिया में उसके आने का प्रयोजन क्या है ? पर शायद यह वह नहीं सोच सकेगा, क्योंकि वह मृत्यु की दिशा में बहुत आगे निकल आया है। और वह अब पीछे लौट नहीं सकता। कैसे वह पीछे लौटे ? कैसे ?

धीरे-धीरे भार्गव की सभी ज्ञानेन्द्रियां सुन्न पड़ गयी हैं और वह निश्चेष्ट-सा फर्श पर लेट गया है। वह अब अन्तिम समय के बिलकुल निकट है। वह कुछ भी नहीं समझ पा रहा है। कुछ भी नहीं। यह सब कैसे हो गया ? कैसे हो रहा है ? वह सिर्फ उस स्वर लहरी को महसूस कर रहा है और परदे की ओर देख रहा है। वह उसी तरह हिल रहा है। वह अब चीख नहीं सकता, वह अब यह नहीं कह सकता कि कौन है ? मैं गोली मार दूंगा। वह यह सब नहीं कर सकता। उसे केवल मर जाना है और वह एक विचित्र मौत मर रहा है। लेकिन क्या कभी उसने इस मौत के बारे में सोचा था ? एक घृणित मौत ! एक निकृष्ट मौत ! और वह यह मौत मरेगा।

क्रमशः स्वर-लहरी तेज होती जा रही है और वह पा रहा है कि यह एक नैसर्गिक संगीत है जिसकी ओर उसके प्राण खिंचे जा रहे हैं। वह अपने प्राणों को रोकना चाहता है कि उधर न खिंचे, पर वह पाता है, ऐसा कर पाना उसके वश की बात नहीं है। ●

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोरियम चक्र

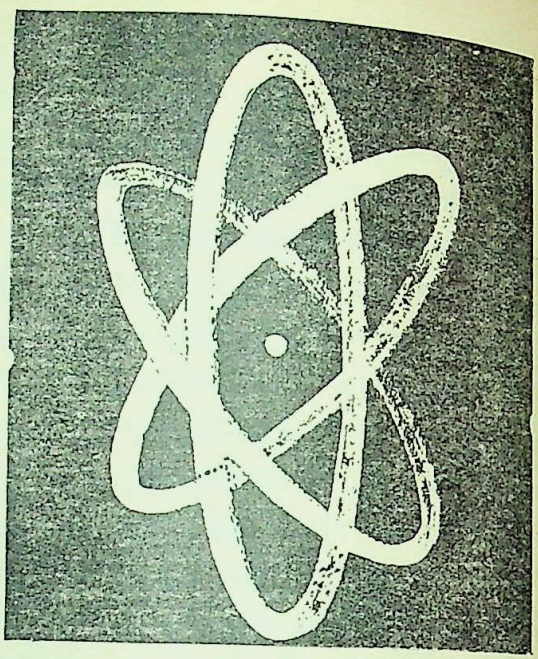

क्या थोरियम यूरेनियम-२३३ में बदला जा सकता है ?

सन्तोषकुमार

थोरियम शब्द 'थोर' शब्द से लिया गया है जो कि नार्वे की भाषा में गर्जन के देवता को कहते हैं। थोरियम तत्त्व की खोज १८२८ में बर्जेलियस ने की थी। इसकी खोज के समय बर्जेलियस को स्वयं इसके अन्दर निहित असंख्य शक्ति का अनुमान नहीं था। नाभिकीय विज्ञान तथा तकनीकी के क्षेत्र में की गयी खोजों के आधार पर यह सिद्ध हो गया है कि इसके अन्दर वे ही गुण निहित हैं जो इसके देवता के हैं, जिनके नाम पर यह बना है। चूंकि 'आकाशीय गर्जन' विद्युत् चमक के साथ जोर की आवाज को कहते हैं, अनुभवी लोगों का अनुमान है कि भविष्य में थोरियम से विशाल विद्युत् शक्ति पैदा की जा सकती है, किन्तु इस स्थिति के आने से पूर्व अनेक समस्याओं का सुलझना आवश्यक है।

भारतीय मोनाजाइट में ९% थोरियम

भारत में मोनाजाइट सबसे अधिक मात्रा में पाया जाता है। भारतीय मोनाजाइट में ९% थोरियम होता है, जो कि विश्व का सबसे बड़ा प्रतिशत (%) है। मोनाजाइट आदिकाल को रवेदार चट्टानों में पाया जाता है। शताब्दियों के बाद मानसूनों तथा बदलते तापमानों से इकट्ठी चट्टानें टूट गयीं तथा बहकर नदियों के किनारों पर जम गयीं। ये खनिज अधिकांशतः मध्य बिहार तथा केरल के तट पर पाया जाता है। अनुमान लगाया जाता है कि लगभग ५० लाख टन थोरियम निकालने योग्य अवस्था में है। प्रत्येक टन थोरियम की सामर्थ्य लगभग ३० लाख टन अच्छी किस्म के कोयले के बराबर होती है। यही कारण है कि भारतवर्ष थोरियम को अपना न्यूक्लियर तत्त्व बना रहा है। जो दो प्राकृतिक तत्त्व न्यूक्लियर ईंधन में परिवर्तित किये जा सकते हैं उनमें से थोरियम एक है। दूसरा तत्त्व यूरेनियम-२३८ है। चूंकि प्राकृतिक यूरेनियम में कुछ भाग विस्फोटनशील यूरेनियम-२३५, और प्राकृतिक थोरियम में ऐसा कोई भी भाग नहीं होता है, इस कारण प्राकृतिक थोरियम न्यूक्लियर क्रियाकारक (nuclear reactor) के ईंधन के रूप में सीधा इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। उपयोग करने से पूर्व उसको विस्फोटनशील तत्त्व में परिणित किया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत में प्राकृतिक यूरेनियम काफी मात्रा में पाया जाता है

थोरियम का विस्फोटनशील यूरेनियम-२३८ में परिवर्तन सिर्फ यूरेनियम-२३५ या प्लूटोनियम से ही सम्भव है। भारत में प्राकृतिक यूरेनियम काफी मात्रा में पाया जाता है। इसमें लगभग ७% विस्फोटनशील यूरेनियम-२३५ होता है। चूंकि यूरेनियम-२३८ और यूरेनियम-२३५ दोनों एक-से रासायनिक पदार्थ हैं, अतः उन दोनों को आपस में एक-दूसरे से अलग करना एक कठिन कार्य है। अलग करने के लिए बड़े लम्बे-चौड़े गैसीय प्रस्युन्दन कक्षों की आवश्यकता है और काफी विद्युत् की मात्रा इन कक्षों को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक होती है। अमरीका में ऐसे तीन गैसीय प्रस्युन्दन कारखाने हैं जिनकी अनुमानतः लागत १६ अरब रुपये है तथा इन्हें चलाने के लिए इतनी विद्युत् की आवश्यकता होती है जितनी पूरे फ्रांस में कल-कारखानों को चलाने के लिए काम आती है।

दूसरा उपाय

जहां तक भारत का सम्बन्ध है, इस प्रकार के गैसीय प्रस्युन्दन कक्ष लगाने का प्रश्न ही व्यर्थ है। इसलिए दूसरा उपाय ही सम्भव है कि वह प्राकृतिक यूरेनियम से चलाये जाने वाले न्यूक्लियर क्रियाकारकों से प्लूटोनियम बनाये और इस प्रकार बने प्लूटोनियम से थोरियम को यूरेनियम-२३३ में बदले। प्लूटोनियम प्राकृतिक अवस्था में नहीं पाया जाता है, वह सिर्फ न्यूक्लियर क्रियाकारक में ही बनता है। शुरू में तो क्रियाकारक द्वारा प्लूटोनियम की पैदावार उसमें लगाये गये यूरेनियम से कम होती है, किन्तु बाद में वह बढ़ जायगी। जितना यूरेनियम-२३३ उसे चलाने के लिए आवश्यक होता है, उससे अधिक कुछ समय बाद पैदा होना शुरू हो जाता है। जब यह स्थिति आ जायगी। तब भारतवर्ष शक्ति के क्षेत्र में स्वावलम्बी हो जायगा।

एक शक्ति-क्रियाकारक

क्रिया-चक्र शुरू करने के लिए यह आवश्यक नहीं था कि प्रथम शक्ति-क्रियाकारक (power reactor) स्थापित किया जाता और उससे प्लूटोनियम प्राप्त किया जाता। इस कार्य के लिए अगस्त १९६३ में अमरीकी सरकार से एक सन्धि की थी जिसके अनुसार अमरीका भारत के प्रथम शक्ति-क्रियाकारक के लिए शुरू में चलाने के लिए शक्ति-ईंधन देगा। यह शक्ति क्रियाकारक १९६८ में तारापुर में कार्य करने लगेगा। इसकी कार्यक्षमता ३८० मेगावाट होगी। क्रियाकारक की राख से प्लूटोनियम अलग करने का कारखाना ट्रौम्बे में भारतीय वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों की सहायता से पहले ही बनाया जा चुका है। इस कारखाने में कोई भी विदेशी सहायता नहीं ली है तथा यह कारखाना एशिया में अपनी प्रकार का पहला कारखाना है।

स्वावलम्बन

इस प्रकार के चक्र को चालू करके ट्राम्बे के वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों ने अपने प्रयत्नों से भारत भूमि पर वे सभी सामग्रियां उपलब्ध कर दी हैं जो थोरियम चक्र से सम्बन्ध रखती हैं। इस क्षेत्र में काफी तरक्की की जा चुकी है। सभी सम्भावित प्रश्नों को सरल किया जा चुका है। मोनाजाइट से फिर से शुरू करने पर पता चलता है कि प्रकृति ने भी इस तत्त्व को अलग करने में काफी योग दिया है। दक्षिणी भारत के काले रेत में ५% मोनाजाइट पाया जाता है। ट्रावनकोर में इस खनिज से मोनाजाइट को अलग किया जाता है। यहां पर ९९% तक की शुद्धता का मोनाजाइट प्राप्त किया जाता है।

मोनाजाइट में ९% थोरियम तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

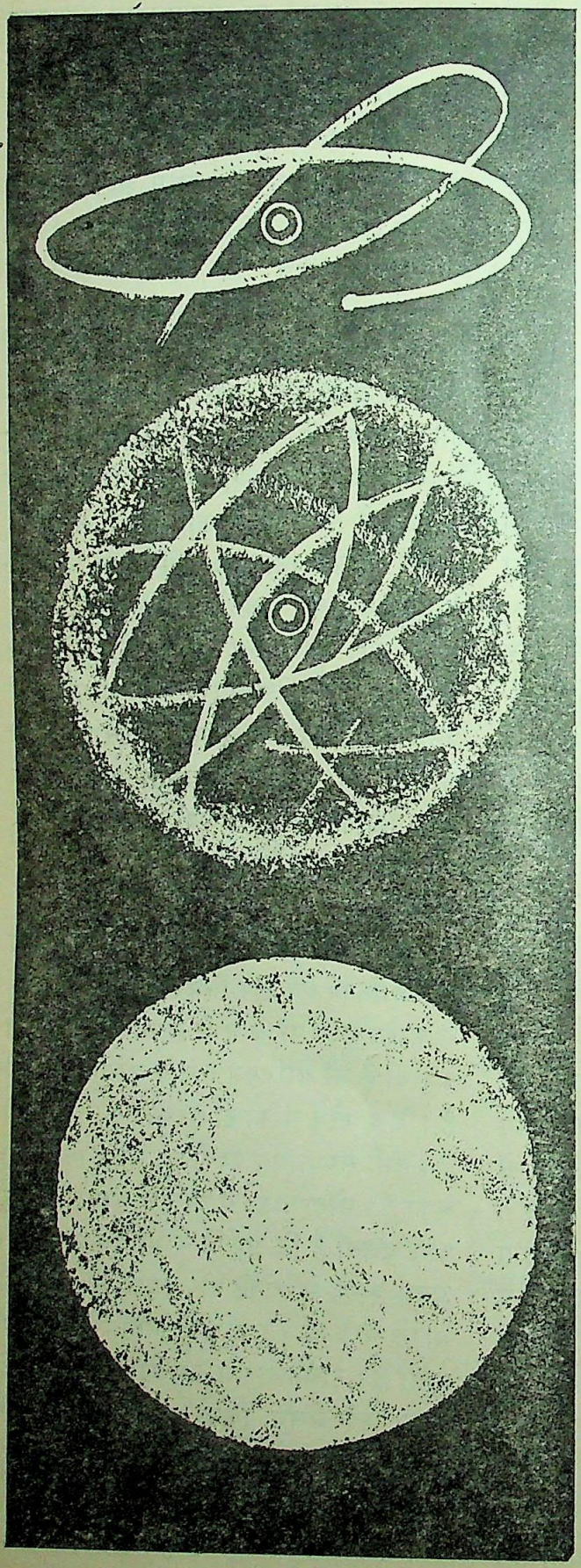

३५% यूरेनियम होता है। इसलिए दूसरा कदम यह होता है कि इस खनिज से इन दोनों तत्त्वों को अलग किया जाय। इन दोनों तत्त्वों को अलग करने का कार्य आलवे (केरल) के कारखाने में होता है और सभी दुष्प्राप्य तत्त्व (rare earth elements) भी इससे अलग किये जाते हैं। सभी कुछ अलग करने पर बची वस्तु थोरियम हाइड्रोआक्साइड होती है। इसी में अधिकांश यूरेनियम होता है।

शोधन क्रिया की तृतीय क्रिया ट्राम्बे स्थित थोरियम कारखाने में ही सम्पन्न की जाती है। यह थोरियम शोधन का कारखाना एशिया में अपने प्रकार का सबसे बड़ा कारखाना है। यहां पर यथोचित क्रियाकारकों की सहायता से थोरियम हाइड्रोक्साइड को थोरियम नाइट्रेट में परिवर्तित किया जाता है। यहीं पर अन्तिम शोधन किया जाता है। यही थोरियम नाइट्रेट पूरे भारतवर्ष की गैस मेटल व्यवसाय की आवश्यकताओं को पूरा करता है। यहां से प्राप्त हुआ यूरेनियम क्लोराइड ट्राम्बे के ही यूरेनियम कारखाने में भेज दिया जाता है जहां पर उसमें से न्यूक्लियर किस्म का यूरेनियम बनाया जाता है।

हाइड्रोजन के परमाणु में इलेक्ट्रान अत्यन्त तीव्रता से चक्कर लगाता है। यही कारण है कि हाइड्रोजन का परमाणु ठोस लगता है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थोरियम आक्साइड

अन्त में न्यूक्लियर शुद्धता की कुछ थोरियम आक्साइड की मात्रा न्यूक्लियर क्रियाकारकों में बनायी जाती है। 'सायरस' (cirus) क्रियाकारक (ट्राम्बे स्थित कनाडा-इण्डिया क्रियाकारक) में शोधकार्य हेतु तथा यूरेनियम-२३३ में परिवर्तन हेतु थोरियम आक्साइड रखा जाता है। ट्राम्बे संस्थान में ही थोरियम आक्साइड को थोरियम धातु में अवकृत किया जाता है। इस प्रकार के कार्य परमाणु शक्ति संस्थान के धातु-विज्ञान विभाग में होते हैं।

लाभ-हानि

यूरेनियम-२३८ के स्थान पर थोरियम के उपयोग में कुछ लाभ तथा कुछ हानियां हैं। यूरेनियम-२३३ के उपयोग के साथ सबसे बड़ी कमी यह है कि इसके उपयोग के साथ कुछ रेडियोधर्मिता में काम करना पड़ता है। क्रियाकारक से जब थोरियम को यूरेनियम-२३३ में बदलते हैं तब कुछ भाग यूरेनियम-२३२ भी बनता है। यूरेनियम-२३२ से बड़ी तीव्र गामा-किरणें निकलती हैं। चूंकि यूरेनियम-२३२ और यूरेनियम-२३३ दोनों एक से ही तत्त्व हैं, अतः उन्हें अलग करना सरल कार्य नहीं है। इसलिए यूरेनियम २३३ के प्रयोग के लिए या तो यूरेनियम-२३२ को बनने ही न दिया जाय अर्थात क्रियाकारक में से थोरियम को जल्दी निकाल लिया जाय, या क्रिया को दूर से नियन्त्रित किया जाय, ताकि कार्यकर्ता पर कड़ी गामा-किरणें न पड़ सकें। ●

हाईस्कूल और हायर सेकण्डरी कक्षाओं के लिए हमारे उपयोगी प्रकाशन

१. **जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ३·००

२. **वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ३·००

३. **प्रारम्भिक भौतिकी**—दयाप्रसाद खण्डेलवाल — मूल्य : ३·५०

४. **प्रेक्टिकल जन्तु-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : २·००

५. **प्रेक्टिकल वनस्पति-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : २·००

६. **सामान्य विज्ञान**—मेहरोत्रा, विद्यार्थी, खण्डेलवाल — मूल्य : ६·२५

७. **सरल माध्यमिक जीव-विज्ञान**—आर. डी. विद्यार्थी — मूल्य : ५·००
(हायर सेकंडरी की कक्षा ९ और १० के लिए)

श्रीराम मेहरा एण्ड कम्पनी, आगरा – ३

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान-क्लब

प्रिय बच्चो,

तुमने यह चाहा है कि मैं अपने इस पत्र में अधिक से अधिक स्थान तुम्हारे पत्रों को दिया करूं। भविष्य की बात तो नहीं कह सकती, पर इस बार तुम्हारी बात जरूर मान रही हूं। ये रहे तुम्हारे पत्र—

ज्ञानरंजन (वाराणसी) : अक्तूबर अंक की सभी रचनाएं प्रभावशाली थीं। **'आंवला'** (शशिभूषण शलभ) में एक विशेष पादप के बारे में प्रामाणिक जानकारी मिलती है। **'मकड़े, मकड़ियां और बिच्छू'** (कुमारी प्रमिला) में अरैक्निडा वर्ग के जन्तुओं पर पर्याप्त प्रकाश पड़ा है। **'प्रेरणाएं'** (डा. महेश्वरसिंह सूद) बहुत पसन्द आया। इस मास की वैज्ञानिक कहानी **'वह रहस्यमय जेटयान'** (अनीता सहगल) आकर्षित करती है। भविष्य में भी ऐसी ही कहानियां दिया करें।

प्रमोदकुमार (कलकत्ता) : अक्तूबर अंक की वैज्ञानिक कहानी **'वह रहस्यमय जेटयान'** (अनीता सहगल) बहुत पसन्द आयी। **'क्षय एक घातक रोग'** (रमेशप्रसाद शर्मा) में क्षय के विषय में काफी जानकारी मिलती है। **'ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व'** (अशोककुमार चौबे) सूचना-प्रधान है। **'गोबर की खाद'** (सत्यकुमार) का सामायिक महत्त्व है।

जीवनकुमार (गाजीपुर) : **'लाख का कीड़ा और उसका पालन'** (यमुनाधर पाण्डेय) सूचना-प्रधान है। **'ट्रांस-यूरेनियम तत्त्व'** (अशोककुमार चौबे) रोचक लगा। अन्य लेखों में **'गोबर की खाद'** (सत्यकुमार) **'प्रेरणाएं'** (डा. महेश्वरसिंह सूद) पठनीय हैं। वैज्ञानिक कहानी **'वह रहस्यमय जेटयान'** (अनीता सहगल) रोचक है।

और अब एक उपयोगी तथा दिलचस्प पत्र—

विनोद (गोरखपुर) : पढ़ने-लिखने के सम्बन्ध में आपके विचार बहुत उपयुक्त लगे। मेरा खयाल है, इससे अनेक सदस्य लाभ उठायेंगे। मेरा एक और मत है। मैंने सुन रखा है कि रुचि को मौलिक रूप में छोड़ देना चाहिये। जबर्दस्ती किसी विषय में रुचि पैदा की जा सकती है, लेकिन क्या इससे बालक का मौलिक विकास रुक नहीं जायेगा ?

···जहां तक बालक के मौलिक विकास का प्रश्न है, यह बात विचारणीय है। परन्तु सीखने की प्रक्रिया में जो सामान्य बातें हैं, उनमें एक यह भी है कि कुछ विषयों में रुचि पैदा करनी पड़ती है। तुम वैज्ञानिक होना या साहित्यकार चाहो, तुम्हें माध्यम के रूप में कोई भाषा तो सीखनी ही पड़ेगी। सबसे पहले यह भी आवश्यक है कि भविष्य में क्या करना है, इसकी रूपरेखा बना ली जाय। समय-समय पर मैं तुम्हें इस बारे में बताती रहूंगी।

सस्नेह तुम्हारी,
कृष्णा दीदी

प्रतियोगिता संख्या ८० के विजेता

प्रथम पुरस्कार

कृष्णकुमार (१३३१९) मेरठ।

द्वितीय पुरस्कार

रघुवीरसिंह (१३८६९) पटना।

तृतीय पुरस्कार

अनूपकुमार (१२५८४) सागर।

कूपन प्रतियोगिता संख्या ८२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब के नये सदस्य

महेन्द्र
(स.सं. १८९२०)

विक्रमसिंह
(स.सं. १८९२३)

इन्द्रजीत
(स.सं. १८९३०)

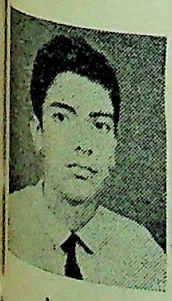

पंकज
(स.सं. १८९४४)

१२६९९ विजयकुमार (१८) टीकमगढ़, १२७०० विजयमोहन (१३) इलाहाबाद, १२७०१ देवेन्द्रकुमार (१७) इलाहाबाद, २ सुशीलकुमार (१५) इलाहाबाद, ३ मुहम्मद शरीफ (१५) रांची, ४ महेन्द्रसिंह (२१) रतलाम, ५ अभय (१७) पटना, ६ संघासिंह (१८) जमशेदपुर, ७ अशोककुमार (१५) मेरठ, ८ श्रीकान्त (१३) कासगंज, ९ बालकृष्ण (१९) सिरोज, १० प्रभाकर (१६) रांची ११ शोभनायक (१६) सारन, १२ अशोककुमार (१८) सागर, १३ सुरेशकुमार (१४) झाड़ोल, १४ संजीवलोचन (१६) मुरादाबाद, १५ अशोककुमार दुबे (१८) इन्दौर, १३ दीनानाथ (१७) पटना, (१७) गौरीशंकर (१४) दिल्ली, १८ अखिलकुमार (१६) अलीगढ़, १९ कु. शैल मालवीय (१९) इटारसी, १० २० ओमप्रकाश (१७) रांची, २१ सुरेशनन्द (१५) रांची, २२ अब्दुल मतीन (१७) आमला, २३ अब्दुल जलील (१९) आमला, २४ हर्षवर्धन (२०) गुरुदासपुर, २५ ओमप्रकाश (१६) अम्बाला, २६ विजयकुमार (१७) बदायूं, २७ रामगोपाल (१६) अहमदाबाद, २८ कुटुवा (१७) हजारीबाग, २९ शरद (१९) जबलपुर, ३० कृष्णगोपाल (१७) कटनी, ३१ भोलाशंकर पाण्डेय (१८) कटनी, ३२ दयाराम (२०) कटनी, ३३ प्रदीपकुमार (१४) रांची, ३४ राजेन्द्रकुमार (१३) जयपुर, ३५ नरेन्द्रकुमार (१३) पटना ३६ विजयकुमार (१७) इलाहाबाद, ३७ तमालकुमार (१२) इलाहाबाद, ३८ सत्यनारायण (१६) इटारसी, ३९ अनीता सहगल (१३) आगरा, ४० मनजीतसिंह (१८) पानीपत, ४१ अंजनीकुमार (१६) रांची, ४२ रमेशचन्द्र जैन (२२) इन्दौर ४३ श्रीकृष्ण (१८) अजमेर, ४४ अशोककुमार (१६) उरई, ४५ जगतमोहन (१६) सहारनपुर, ४६ पी. के. (१९) विदिशा, ४७ गुरमीत (८) इटारसी, ४८ प्रेमस्वरूप (१४) बयाना, ४९ जसवन्तसिंह (१६) नयी दिल्ली, ५० ज्ञानप्रकाश (१७) आगरा, ५१ कु. मंजुला (१८) मेरठ, ५२ कुलदीप (१७) बीकानेर, ५३ लक्ष्मीनारायण डमाम (२३) नादेड, ५४ किरोड़ीमल (२१) सीतापुर, ५५ रामलाल यादव (१८) वाराणसी, ५६ देवेन्द्रसिंह (१३) इटारसी, (५७) अनिलकुमार (१५) इटारसी, ५८ उदयशंकर (१७) पिटोरी ५९ तपनकुमार (१९) पुर्णिया, ६० शरदचन्द्र (१५) इलाहाबाद, ६१ देजेन्द्रसिंह (१७) बिलासपुर, ६२ सुरेन्द्रमोहन (१२) श्रीगंगानगर, ६३ नरेन्द्रमोहन (१६) संगरूर, ६४ रिखबचन्द (१७) सियाणा, ६५ पूर्णिमा (१७) फैजाबाद, ६६ सुरेन्द्रकुमार (२७) सिरसा, ६७ आर. एस. गुप्ता (१६) छिवरामहू, ६८ रविप्रकाश श्रीवास्तव (१७) हरदोई, ६९ नरेन्द्रकुमार (१७) ग्वालियर, ७० अशोककुमार (१७) गुड़गांव, ७१ अशोककुमार (१७) मेरठ कैंटे, ७२ रमेशचन्द्र (१८) उज्जैन, ७३ जैनेन्द्र (१२) मुकुन्दपुर, ७४ रविन्द्रसिंह (१३) झांसी ७५ महेशप्रसाद धनबाद, ७६ ओमप्रकाश सलूजा (१९) पानीपत, (७७) कु. स्नेह (१८) मेरठ, ७८ अजीतकुमार (१५) रांची, ७९ इन्द्रसागर (१९) जुन्नारदेव, ८० सुमनेन्द्र नारायण (१६) नाबतपुर, ८१ राजनकुमार (१४) सहारनपुर, ८२ ओमप्रकाश शर्मा (१५) झांसी, ८३ पुरुषोत्तमनारायण (१८) झांसी, ८४ बसंतकुमार (१८) नरसिंहपुर।

सुशील
(स.सं. १८९५०)

बद्रीनाथ
(स.सं. १८९५२)

राधेमोहन
(स.सं. १८९५८)

चन्द्रप्रकाश
(स.सं. १८९६२)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८२

प्रथम पुरस्कार	२५ रु. की पुस्तकें
द्वितीय पुरस्कार	२० रु. की पुस्तकें
तृतीय पुरस्कार	१५ रु. की पुस्तकें

अन्तिम तिथि : ७ मार्च

इस प्रतियोगिता में केवल विज्ञान क्लब के सदस्य भाग ले सकते हैं। प्रतियोगिता में भाग लेने का कोई शुल्क नहीं है। नीचे दिये हुए प्रश्नों के उत्तर अलग कागज पर स्याही से साफ-साफ लिखकर पृष्ठ ५२ पर छपे कूपन के साथ लिफाफे में बन्दकर निम्नलिखित पते पर भेज दो—

कृष्णा दीदी, संचालिक, विज्ञान क्लब, विज्ञान-लोक, आगरा-३

लिफाफे पर 'विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८२ के उत्तर' लिखना आवश्यक है। उत्तर ७ मार्च तक उपरोक्त पते पर अवश्य पहुंच जाने चाहिये। बाद में आये उत्तरों पर विचार नहीं किया जायगा।

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८२ के प्रश्न

१. १७२६ में अंगरेज ज्योतिर्विद ब्रैडले ने तारों पर एक परीक्षण करके प्रकाश के वेग का अधिक सही मान निकाला। उसके अनुसार प्रकाश का वेग क्या है ?

२. जीन जुवेन्स कौन था ?

३. विश्व के किस पुस्तकालय की पुस्तकें आज से हजारों वर्ष पूर्व सूरज की रोशनी में सुखाने के बाद भट्ठी में पकायी जाती थीं ?

४. पोलियों के टीके का सामान्य प्रयोग कब से प्रारम्भ हुआ ?

५. यह किसका आविष्कार है कि शिराओं में नन्ही-नन्ही कपाटिकाएं होती हैं ?

६. काक कौन था ?

७. सब पदार्थ किन सूक्ष्म इकाइयों के बने हुए हैं ?

८. तुल्यकालिक कक्षा अन्तरिक्ष में पृथ्वी से कितनी दूरी पर है ?

९. अनुरेखन कार्यों के लिए मुख्यतः किन उपकरणों का प्रयोग किया जाता है ?

१०. अनुसूर्य बिन्दु (Perihelion) किसे कहते हैं ?

विज्ञान क्लब प्रतियोगिता संख्या ८० के प्रश्नों के उत्तर

१. ज्वार-भाटा सिद्धान्त।

२. सिलुरियन युग (Silurian Era) में।

३. कोलम्बस के।

४. प्रसिद्ध नक्शा-शास्त्री था।

५. हां, इस तरह उस फसल में कुछ समय बाद कीड़े लगने लगते हैं।

६. लगभग एक चौथाई।

७. समुद्र की गहराई में उतरने का एक उपकरण।

८. हां।

९. बृहस्पति (Jupiter)।

१०. बाष्प पम्प (Steam pump)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

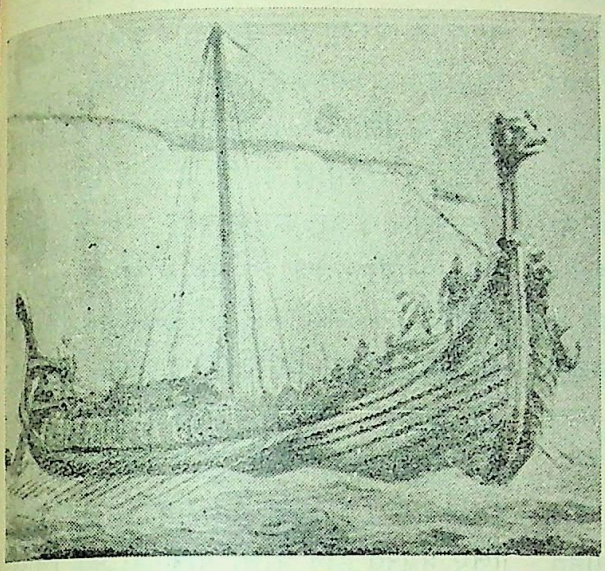

तुम्हारी कलम से

अतीत के पृष्ठों पर भारतीय नाविक

बिजयकुमार जैन (स. सं. ७७८८)

भारत जहाजरानी का आदि गुरु है, इस कथन की पुष्टि के लिए हमें अतीत की गहराइयों में उतरना पड़ेगा तथा प्राचीन काल में लिखे गये ग्रन्थों से संकलित तथ्यों की ओर ध्यान देना होगा क्योंकि भारत के प्राचीन ग्रन्थों में वेदों को बड़ा महत्त्व दिया गया है। ऋग्वेद सबसे पुराना ग्रन्थ है। ऋग्वेद में जलयात्रा का बड़ा ही मनोहर विवरण मिलता है। ऋग्वेद-काल में जलयात्रा का एक मात्र साधन नाव या जहाज था। ऋग्वेद में एक स्थान पर ऋषि अपने इष्टदेव से प्रार्थना करते हुए कहता है, 'हे देव, हमारे आनन्द एवं कल्याण के लिए हमें जहाज द्वारा समुद्र-पार ले चलो।'

ऋषि जहाज द्वारा समुद्र पार क्यों जाना चाहता था, यह प्रश्न हमारे सामने उठ खड़ा हुआ! जबकि इतना बड़ा भारत भू-खण्ड अछूता पड़ा था, तब जल-यात्रा की आवश्यकता क्यों पड़ी? इसका एक मात्र कारण था भारतीय संस्कृति का अन्य देशों में प्रसार एवं प्रचार। संस्कृति के प्रचार एवं प्रसार के लिए उस युग के लोगों ने जलयात्रा की उपयोगिता समझी।

उनके इस निर्णय में दूरदर्शिता झलकती है। उन्होंने विदेश-यात्रा का महत्त्व समझा। अन्य देशों की यात्रा करने तथा अपनी संस्कृति द्वारा उन्हें प्रभावित करने से सांस्कृतिक लाभ के साथ-साथ आर्थिक लाभ का महत्त्व भी भारतीयों को सुविदित था! अतः सुदूर देशों की यात्रा के लिए उन्होंने नये-नये समुद्री मार्ग की खोज की और अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए समुद्र का हृदय नौकाओं और जहाजों द्वारा मथ डाला! कठिनाइयां आयीं, उनका दृढ़ता के साथ सामना किया। उनके सुदृढ़ अध्यवसाय के कारण भारत शताब्दियों तक संसार के व्यापार का आकर्षण केन्द्र बना रहा।

विश एवं उनके विशाल जलयान

सुदूर पूर्व एवं पश्चिमी देशों में भारत के नेतृत्व की धाक जमी रही। व्यापार-विनिमय के लिए विश् (पणि या व्यापारी) विशाल जहाजों में यात्रा करते थे! उनकी यह यात्रा काफी लम्बे समय के लिए हुआ करती थी। लोभी व्यापारी की निन्दा करते हुए ये शब्द वेद में लिखे गये हैं: 'ये (व्यापारी) धन के लालच में अपने द्वारा सम्पूर्ण समुद्र को मथ डालते हैं।' भारतीय व्यापारियों की इन लम्बी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यात्राओं द्वारा यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अवश्य ही भारतीय व्यापारियों का सम्बन्ध चाल्डिया, मिस्र एवं बेबीलोन से रहा होगा, क्योंकि उस समय मिस्र की सभ्यता एवं सुमेरी सभ्यता उन्नत थी।

वैदिक काल एवं महाकाव्य युग में भी भारतीयों द्वारा जलयात्रा का वर्णन मिलता है। महाकाव्य युग की सर्वोत्तम कृति रामायण में जलयात्रा का वर्णन है। उसके किष्किन्धा-कांड में सुग्रीव सीता की खोज करने वाले वानरों को आदेश देते हैं कि वे कोषकार द्वीप, यव द्वीप (जावा) एवं सुवर्ण द्वीप (सुमात्रा) की भी यात्रा करें। उसी आदेश में लोहित सागर जाने का आदेश भी दिया था। उस समय का लोहित सागर आधुनिक लाल सागर का नाम है।

जलयानों द्वारा मिस्र से व्यापार

इस काल में उपयोग में आने वाले जहाज के परिमाण एवं आकार का विवरण बौद्ध साहित्य से उपलब्ध है। ई. पू. ४०० के लगभग सिंहल द्वीप (लंका) का युवराज विजय ६०० व्यक्तियों के साथ एक पोत में यात्राकर बंगाल के सिंहबाहु के यहां आया था। उसके साथ १५,००० व्यक्ति थे। अतः जहाज के आकार का अनुमान लगाया जा सकता है। मौर्य शुंग काल (३०० ई. पू. से १०० ई. पू.) में जलयात्रा की सीमा और विस्तृत हो गयी। मिस्र के शासक ने पूर्वी देशों से व्यापार बढ़ाने के उद्देश्य से स्वेज नहर का मार्ग खोल दिया, जिससे भारत पश्चिमी देशों को माल लाल सागर के मार्ग से निर्यात करने लगा।

गुप्त काल में भारत का नाम विदेशों में बड़ा ही उन्नत था। विदेशी यात्रियों ने भारतीयों के जलयात्रा प्रेम, व्यापार कुशलता एवं समृद्धिका वर्णन अपने यात्रा-विवरणों में किया है। स्ट्रोबो नामक यूनानी यात्री ने अरब और फारस के किनारे से मिस्र की ओर जाते १२० पोतों का जहाजी बेड़ा देखा था। उस काल में भारत से जहाजों एवं नौकाओं का निर्यात भी किया जाता था। निअर्कस ने अपनी यात्रा के लिए २,००० नौकाएं तैयार करायीं जिन पर ८ सहस्र यात्री, सहस्रों घोड़े तथा अन्य सामान लादकर काफी दूर की यात्रा पर गये। मेगस्थनीज ने मौर्यकाल के जहाज-निर्माता के समूह का उल्लेख किया है। प्राचीन काल में निर्मित गुफाओं की दीवारों पर उत्कीर्ण विशाल जहाज प्रमाण-स्वरूप हैं। मदुरा के एक मन्दिर में विशाल जहाज चित्रित है। अजन्ता की गुफा में बिहार के लिए प्रयुक्त होने वाली नौकाओं का चित्रण है।

जहाजी यात्रा के लिए मानसून होना आवश्यक है। यूरोपीय मान्यता के अनुसार मानसून की खोज का श्रेय हिपलास को है। यह बात यूरोपियों के लिए ठीक है परन्तु हिपलास से २०० साल पूर्व अर्थात् १२० ई. पू. में भारतीय नाविक लालसागर की यात्रा पर जाया करते थे। अरब सागर में चलने वाले दक्षिण-पश्चिमी मानसून हजारों साल तक व्यापारिक पोतों का मार्गदर्शन करते रहे। इसी मानसून के कारण एशियाई नाविक अरब सागर तथा लालसागर के मार्ग से भारतीय बन्दरगाह तक की यात्रा करते थे। कुछ तो मानसून के कारण एवं कुछ सभ्यता के विकास के कारण हिन्द महासागर समुद्री यात्रा का आकर्षक केन्द्र बना रहा।

गुप्तकाल के पश्चात् मध्यकाल में भी व्यापार एवं जलयात्रियों के आकर्षण का केन्द्र भारत ही रहा।

लगभग १,००० वर्ष पूर्व परमार नरेश भोज ने युक्ति कल्पतरु नामक ग्रन्थ की रचना करवायी थी। इस ग्रन्थ में जहाज निर्माण के प्रत्येक पहलू का विशद् वर्णन है। जहाज एवं नौका का परिमाण एवं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

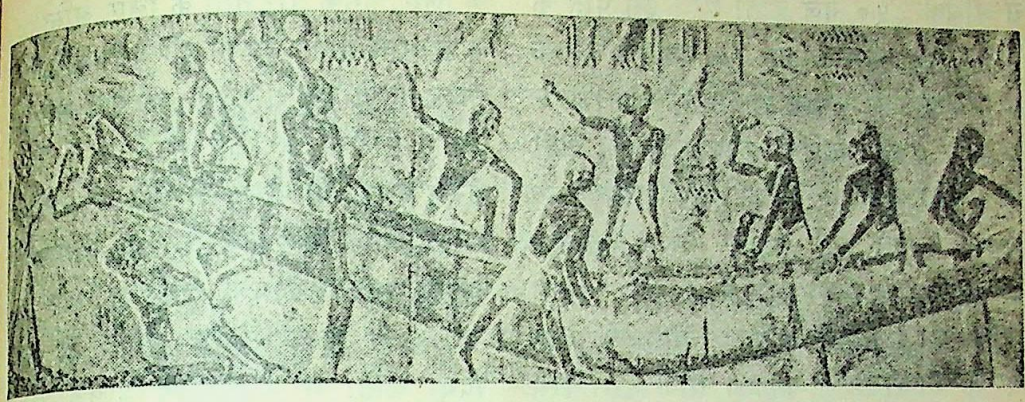

मिस्र के शासक ने पूर्वी देशों से व्यापार बढ़ाने के उद्देश्य से स्वेज नहर का मार्ग खोल दिया। (चित्र) मिस्री नाविक (एक प्राचीन कलाकृति)

आकार किस प्रकार का होना चाहिये, यह भी मिलता है।

कौन-सी लकड़ी हलकी होती है एवं कौन-सी लकड़ी कड़ी होती है आदि अनेक बातों का वर्णन मिलता है जिससे उस समय के भारतीय मस्तिष्क के वैज्ञानिक विकास का पता चलता है तथा महसूस होता है कि उस समय पोतनिर्माण कला शैशाववस्था में नहीं थी। उस समय वह प्रौढ़ता की ओर अग्रसर होती जा रही थी।

अनोखे जलयान

मुगल काल में भी भारतीयों की रुचि परिस्कृत होती रही। मार्कोपोलो, ओडरिक (१३२१), इब्नबतूता (१३२५-४७) तथा अब्दुर्रज्जाक ने अपने-अपने यात्रा विवरण में भारतीयों की व्यापार कुशलता, समृद्धि एवं अतुल जहाजी शक्ति का वर्णन किया है। मार्कोपोलो ने अपने यात्रा-संस्मरण में लिखा है कि इस जहाज में १६० कमरे थे, जिसका उपयोग काली मिर्च ढोने के लिए किया जाता था। इसमें ८०० यात्री यात्रा भी कर सकते थे। भारतीय जहाज मजबूत तथा विशाल होते थे। एक-एक जहाज में ५ मस्तूल एवं ५ पालों की व्यवस्था होती थी। अहमदाबाद, विशालगढ़ एवं गुजरात के नृपतियों के पास जलसेना थी। अतः ये जलसम्राट के नाम से जाने जाते थे। इनका काफी प्रभाव था।

भारत की अतुल जहाजी शक्ति का उपयोग एवं उसका संगठन मराठा काल (१७२५-१८००) के योग्य मराठा शासकों द्वारा किया गया। जहाजी शक्ति का उपयोग व्यापारिक कार्यों के लिए न कर, साम्राज्य की रक्षा के लिए शिवाजी, कान्होजी अंगिरा एवं शम्भूजी द्वारा किया गया। १६वीं शताब्दी में आन्ध्र की जनभाषा में लिखी गयी पुस्तक पाइका खेड़ा [पइका संस्कृत भाषा के शब्द पदाति का अपभ्रंश रूप है; खेड़ा= खजूर के समान नुकीली पत्ती (आन्ध्र की जन भाषा में अर्थ)] में युद्ध में उपयोग आने वाले जहाजों का वर्णन है। उस पुस्तक में जहाज के अनेक आकार-प्रकार एवं विभिन्न नाम दिये गये हैं। इस पुस्तक में १२ अध्याय हैं जिनमें कुछ अध्यायों के नाम निम्नांकित हैं—(१) व्यवस्था, (२) सैनिकों की भरती, (३) साहसिक यात्रा के लिए मंगलकारी दिन, सैनिकों की पोशाक एवं अस्त्र-शस्त्र, (४) झण्डा का महत्त्व, (५) अस्त्र-शस्त्र, (६) किलाबन्दी, (७) समुद्री संग्राम, (८) युद्ध करने वाली सेना।

युद्धपोत

युद्ध पोतों में प्रमुख पोत चातुरी है। गंगाप्रसाद नामक पोत भी प्रमुख है। चातुरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से अधिक ३५० गज होता था। इस पोत के नामक पोत कम से कम ३० गज एवं अधिक ४ खंड होते थे। प्रथम खंड में धौंकनी (Bellows) द्वारा अग्नि प्रज्वलित की जाती थी, तथा पोत में संचित जल राशि द्वारा बाष्प उत्पन्न की जाती थी। चालक पहिये का सम्बन्ध बाष्प से कर दिया जाता था, जिससे पहिया घूमता था और पानी को तेजी से काटता था। इस तरह जहाज में गति (तीव्रता) आ जाती थी और वह पहले की अपेक्षा तेजी से चलने लगता था।

गंगा प्रसाद नामक नाव दो नावों के मेल से बनती थी। एक प्रमुख नाव पर दूसरी नाव उलटी रखी जाती थी। प्रमुख नाव के ४ खंड होते थे जिनमें क्रमशः युद्धोपयोगी शस्त्रों के लिए, कुमुक और नेता के लिए, अन्तिमखंड पीछे आने वाली टुकड़ी की गतिविधियों पर नजर रखने एवं तत्काल कारवाई करने हेतु तैयार सैनिकों के लिए सुरक्षित था। उस समय दुश्मन के पोतों को नष्ट करने के लिए अग्नि लगाने वाले हथगोला का निर्माण एवं प्रयोग समुद्री संग्राम में होता था। शत्रु पोत को फन्दों द्वारा अथाह सागर में डुबा दिया जाता था। इसलिये प्रत्येक पोत के प्रथम खंड में हथगोले एवं फन्दे अवश्य रखे जाते थे।

उपरोक्त तथ्यों द्वारा यह सिद्ध होता है कि भारत जहाजरानी का आदि गुरु है। ३री सदी से (जब से लिखित प्रमाण उपलब्ध हैं) १६वीं सदी तक भारत का समुद्र पर एकछत्र साम्राज्य स्थापित रहा।

यहां से काटिए

विज्ञान क्लब सदस्यता, विज्ञान-लोक

कृष्णा दीदी,

जन्म-दिन _____ आयु _____

नाम _____

घर का पता _____

_____

_____

स्कूल का नाम _____

शिक्षा _____ रुचि _____

यहां से काटिए

यहां से काटिए

यहां से काटिए

जगदीश मेहरा द्वारा मेहरा आफसेट प्रेस, आगरा में मुद्रित एवं मेहरा न्यूजपेपर्स, आगरा के लिए प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैंक, किसे कहते हैं, डैडी !

जहां, हम अपना रुपया जमा करते हैं और जरुरत पर निकाल लेते हैं।

आप रुपया घर में ही क्यों नहीं रखते ?

रुपया घर में रखना सुरक्षित नहीं है। घर से रुपया चोरी हो सकता है, चूहे काट सकते हैं अथवा दीमक लग सकती है। रुपया अनावश्यक चीजों पर भी खर्च हो सकता है। बैंक में हमारा रुपया हर समय सुरक्षित रहता है। और फिर बैंक हमारे रुपये पर ब्याज भी तो देता है। इससे हमारा धन भी बढ़ता है।

यह तो कमाल की बात है डैडी। आपका कौनसा बैंक है ?

पंजाब नेशनल बैंक, बेटा। यह देश के सबसे पुराने और सबसे बड़े बैंकों में से एक है। देश भर में इसकी ४७५ से अधिक शाखाएं हैं।

पंजाब नेशनल बैंक

PC-PNB-5622 H-1

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Price : 75 paise November 1966 Regd. No. L 1410
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीहारिका

कहानी मासिक

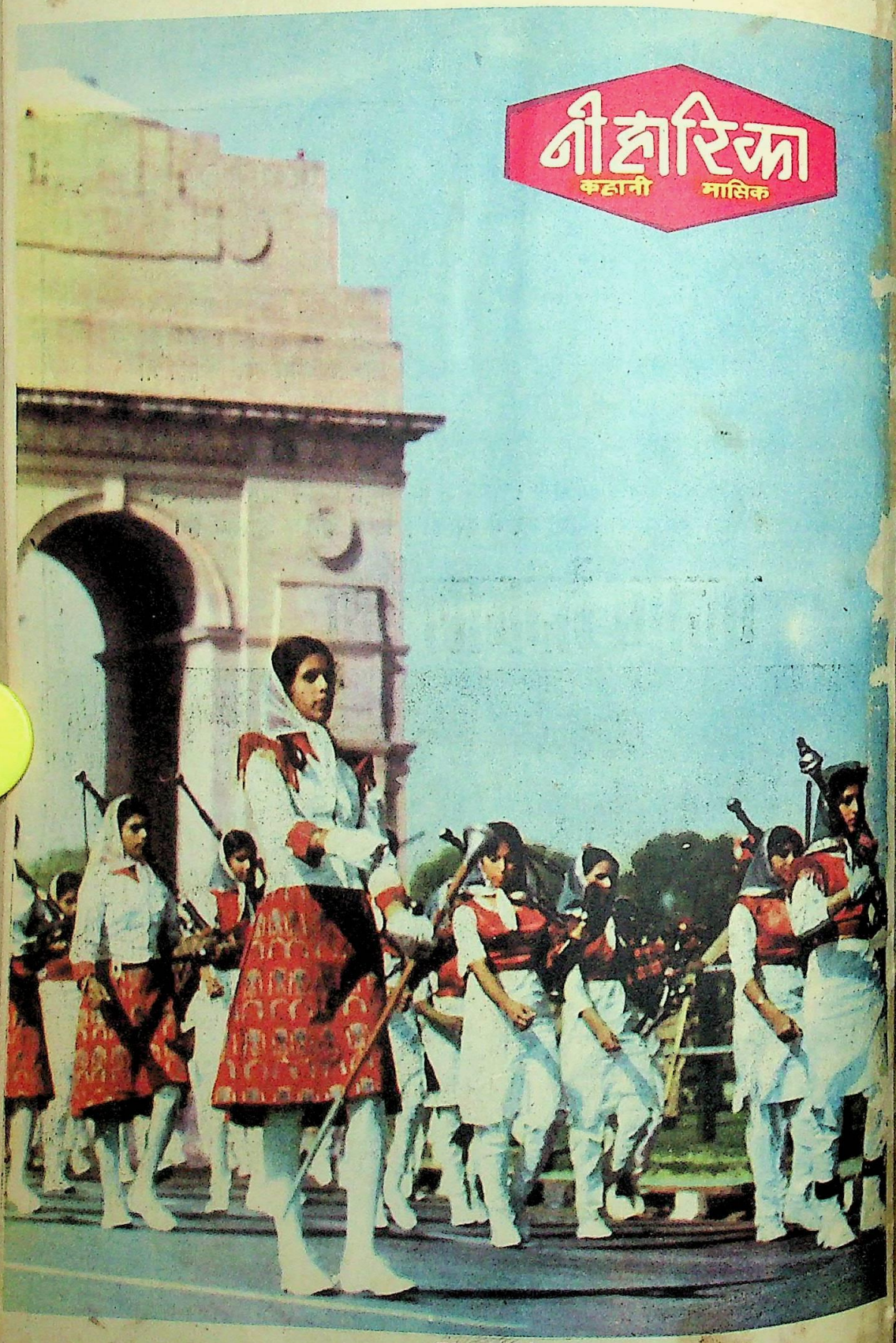

जनवरी अंक

अब सब जगह उपलब्ध है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar